नवीं पनीरी
भाग-१

नवीं पनीरी

बाल कथाएँ गुरु अंगद देव

भाई वीर सिंह साहित्य सदन
भाई वीर सिंह मार्ग, गोल मार्किट, नई दिल्ली-110001

Navin Paneeri Guru Angad Dev

आधार : अष्टगुर चमत्कार -भाई वीर सिंह
साखीकार : डॉ.हरबंस सिंह चावला
अनुवाद : डॉ. गुरचरण सिंह

कलापक्ष : बोध राज

प्रकाशक : भाई वीर सिंह साहित्य सदन,
भाई वीर सिंह मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष 23363510, फैक्स 23744347

मुद्रक : प्रिंट मीडिया
1331, चौक संगतराशां
पहाड गंज, नई दिल्ली-110 055

मूल्य : 100/- रुपये

विषय-सूची

गुरु अंगद देव जी

गुरु अंगद देव जी सिक्ख धर्म के दूसरे गुरु हैं। आपका जन्म बैसाख वदी 1, सम्वत् 1561 अर्थात् 31 मार्च सन् 1504 को बाबा फेरू मल जी तथा माता दया कौर जी के गृह में मत्ते की सराय स्थान पर हुआ। मत्ते की सराय को अब नांगे की सराय के नाम से जाना जाता है। यह नगर मुक्तसर से दस मील की दूरी पर, कोट कपूरे वाली सड़क पर स्थित है। इस नगर को बाह्य आक्रमणकारियों ने कई बार लूटा तथा उजाड़ा। गुरु अंगद देव जी के पिता बाबा फेरू मल जी यहीं दुकानदारी किया करते थे। वे गांव के चौधरी तख़्त मल तथा फिरोज़पुर के स्थानक पठान हाकिम का हिसाब-किताब भी सम्भालते थे। सन् 1519 के उपरान्त जब काबुल के मुगल शासक बाबर ने हमारे देश पर आक्रमण करने प्रारम्भ किये तो सराय नांगा को भी नष्ट कर दिया था। अब गुरु अंगद देव जी के पिता बाबा फेरू मल जी अपने परिवार को लेकर पहले हरि के पत्तन, फिर गांव संघर और फिर खडूर साहिब आकर बस गये।

बचपन

गुरु अंगद देव जी का पहला नाम भाई लहिणा जी था। माता-पिता की इकलौती संतान होने के कारण आप घर में बहुत लाडले थे। भाई लहिणा जी की माता, माता दया कौर जी बहुत धार्मिक विचारों वाली थीं। आप स्वभाव से मधुर, नेक तथा संतुष्ट रहने वाली थीं। आप प्रतिदिन अपने बेटे लहिणा को अच्छी-अच्छी कथाएँ (साखियां) सुनाती थीं। भाई लहिणा जी के पिता बाबा फेरू मल जी फारसी (जो उस समय की प्रचलित भाषा थी) के अच्छे ज्ञाता थे। उन्होंने भाई लहिणा जी की पढ़ाई तथा शिक्षा का बहुत अच्छा प्रबंध किया। बालक लहिणा जी सरकारी भाषा फारसी के साथ-साथ अपनी मातृ भाषा पंजाबी के अच्छे विद्वान बन गए। आपके बचपन के साथ जुड़ीं कई कथाएँ प्रचलित हैं। आप कई बार अपनी वस्तुएँ गरीब बच्चों में बांट देते थे। खडूर साहिब से गुज़र रहे तथा आते-जाते साधुओं, संतों, फकीरों को अपने घर ले आते तथा उनकी बड़े चाव से सेवा करते। भाई लहिणा जी के माता-पिता भी उनकी इन बातों से बहुत प्रसन्न थे। सेवा करते हुए तो लहिणा जी कभी थकते ही नहीं थे। बड़ा होने पर भाई लहिणा जी अपने पिता के काम में उनका हाथ बटाने लग पड़े। आप अपने माता-पिता का बहुत सम्मान तथा आदर करते थे। खडूर के लोग उन्हें बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे और उन्हें प्यार करते थे।

विवाह

खडूर में भाई लहिणा जी की एक बुआ रहती थीं जिसका नाम माई विराई अथवा सभराई था। वह सराए नांगा के तख्त मल की बेटी थी। उसका विवाह खडूर के चौधरी महिमा के साथ हुआ था। सात भाइयों की अकेली बहिन होने के कारण उसे सभी सत-भराई (सात भाइयों की) कहते थे। लोगों की ज़बान पर चढ़ते-चढ़ते यही नाम सभराई या विराई प्रचलित हो गया। वह बहुत शांत और स्थिर स्वभाव की स्त्री थी। भाई लहिणा जी के पिता बाबा फेरू मल जी विराई के पिता तख्तमल के पास मुनीमी का काम करते थे। इसी कारण उनका तख्त मल के घर आना-जाना लगा रहता था। विराई बाबा फेरू मल को अपना भाई समझती थी। इसी कारण लहिणा जी उसको बुआ बुलाते थे तथा उन्हें समुचित मान-सम्मान देते थे। विराई जी का भी लहिणा जी के साथ बहुत प्यार तथा स्नेह था। उन्होंने खडूर के साथ लगते गांव संघर के सम्पन्न साहूकार देवी चंद मरवाह खत्री के साथ लहिणा जी के रिश्ते की बात की। देवी चंद की सुपुत्री खीवी जी विवाह के योग्य थी। इधर माई विराई ने इस रिश्ते की बात बाबा फेरू मल जी के साथ भी की। इस तरह जनवरी 1520 में भाई लहिणा जी का विवाह खीवी जी के साथ हो गया। खीवी जी धैर्य, संतोष, नेक तथा मधुर स्वभाव वाली बीबी थी। बहू बन कर आते ही उसने सभी घर वालों का मन इस तरह से जीत लिया जैसे कि वह इसी घर की पुत्री हो।

सन्तान

भाई लहिणा तथा माता खीवी के घर दो बेटों तथा दो बेटियों ने जन्म लिया। बड़े बेटे दासू जी का जन्म 1524 ई. तथा दातू जी का जन्म 1537 ई. में हुआ। दो सुपुत्रियों में बड़ी सुपुत्री बीबी अमरो का जन्म 1526 ई. तथा बीबी अनोखी का जन्म 1535 में खडूर में हुआ। माता-पिता ने अपने बच्चों का लालन-पालन बड़े अच्छे ढंग से किया। माता खीवी ने अपनी बेटियों को घर-गृहस्थी के सभी अच्छे गुण सिखाये। बीबी अमरो का विवाह गांव बासरके (जिला अमृतसर) के भाई जस्सू के साथ हुआ। वह बाबा अमरदास (बाद में गुरु अमरदास जी) के भाई माणक चंद का सुपुत्र था। बीबी अमरो सुघड़, स्यानी तथा सलीके वाली लड़की थी। बाबा अमरदास जी को गुरु घर के साथ जोड़ने वाली बीबी अमरो ही थी।
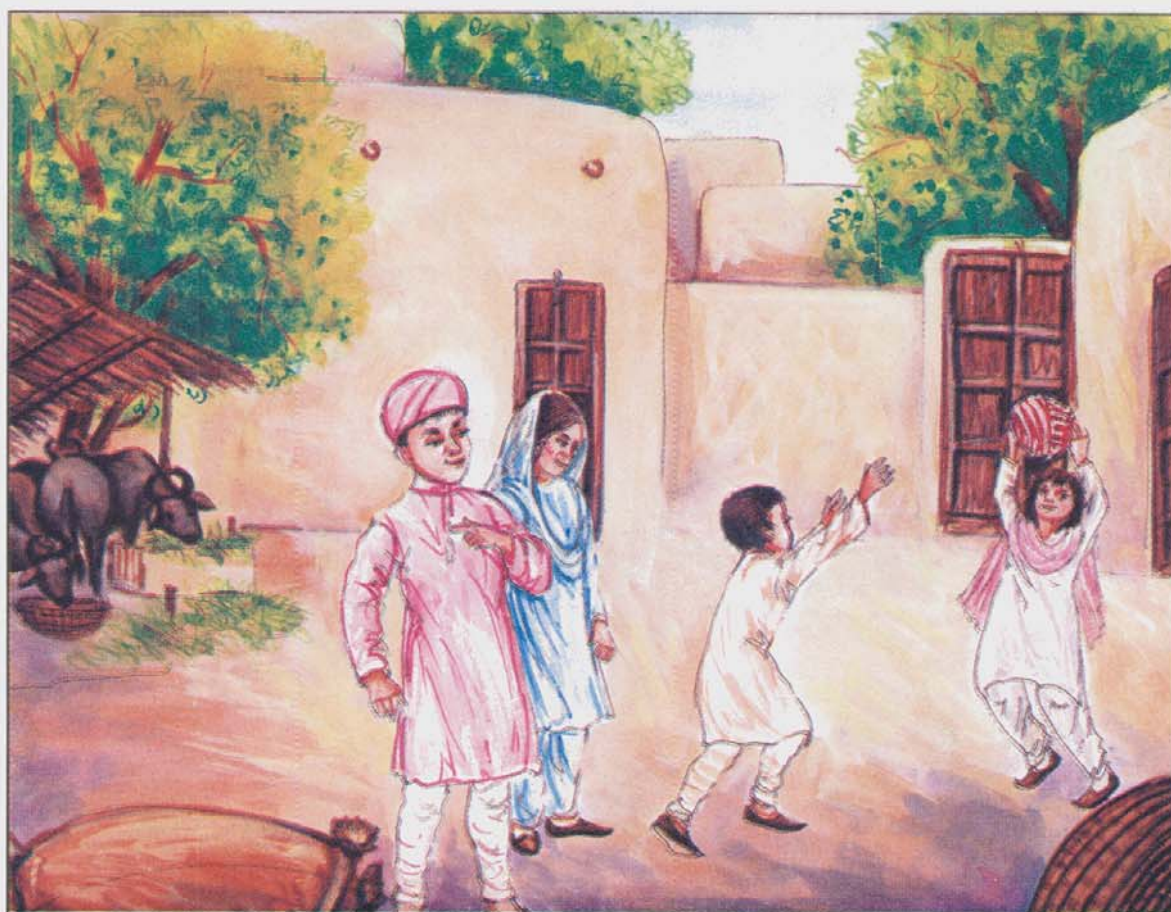
देवी के दर्शनों को

भाई लहिणा जी के पिता बाबा फेरू मल जी देवी के भक्त तथा धार्मिक रुचि वाले वैष्णव थे। आप प्रति वर्ष देवी भक्तों का जत्था लेकर देवी के दर्शनों के लिए ज्वालामुखी जाया करते थे। माता-पिता का प्रभाव बच्चे पर अवश्य पड़ता है। पिता की रुचियों से प्रभावित होकर लहिणा जी ने भी देवी दर्शनों को जाना प्रारम्भ कर दिया। पैरों में घुंघरू, हाथों में करतालें और गले में ढोलकियां, सिर पर गोटे वाली चुन्नियां बांध कर ये भी देवी भक्तों के साथ मिल कर पहाड़ों वाली देवी के दर्शनों को जाने लगे। 1526 ई. में बाबा फेरू मल जी का स्वर्गवास हो गया। इसके उपरान्त सारे घर की जिम्मेदारी भाई लहिणा जी के ऊपर आ गई। पर पिता जी के देहान्त के उपरान्त भी उन्होंने वार्षिक नियम में कोई अन्तर नहीं आने दिया। अब भाई लहिणा जी जत्थे के मुखिया बनकर देवी के दर्शनों को जाने लग पड़े। इस तरह नियम निभाते हुए करीब पांच साल बीत गये। पर जिस तरह की शांति तथा मानसिक स्थिरता वे चाहते थे, वह उन्हें नहीं मिल रही थी। उन्हें ऐसा लगता था कि उनके अन्दर कोई कमी है जो पूरी नहीं हो रही। वे किसी सच्चे गुरु की तलाश में थे।
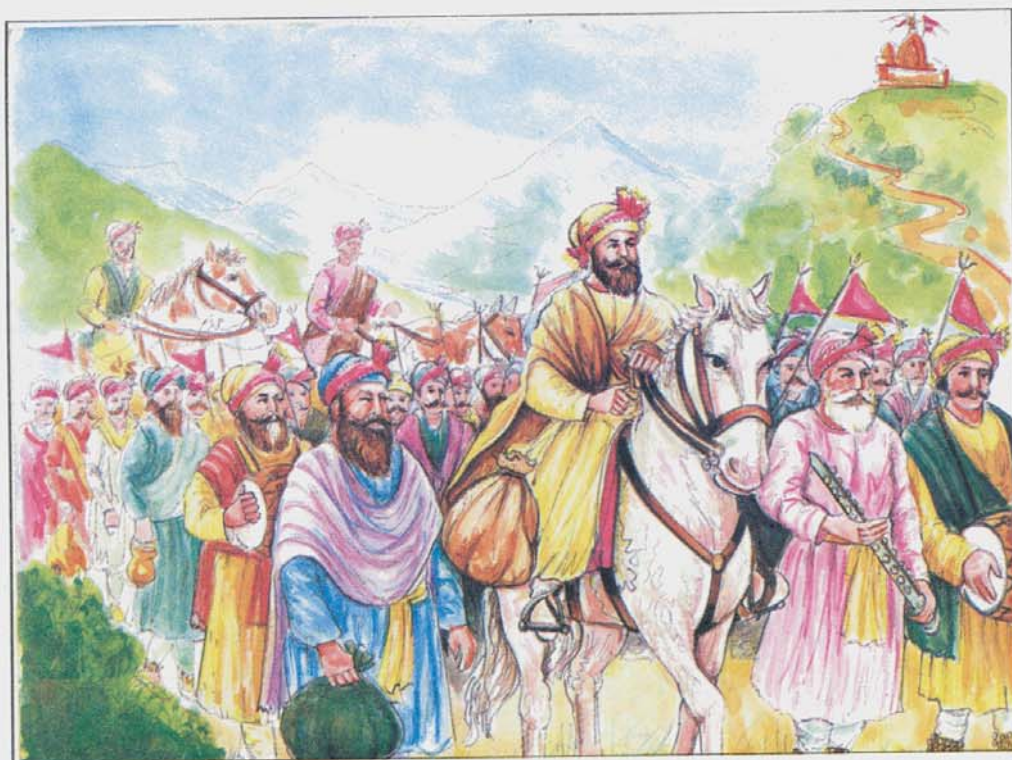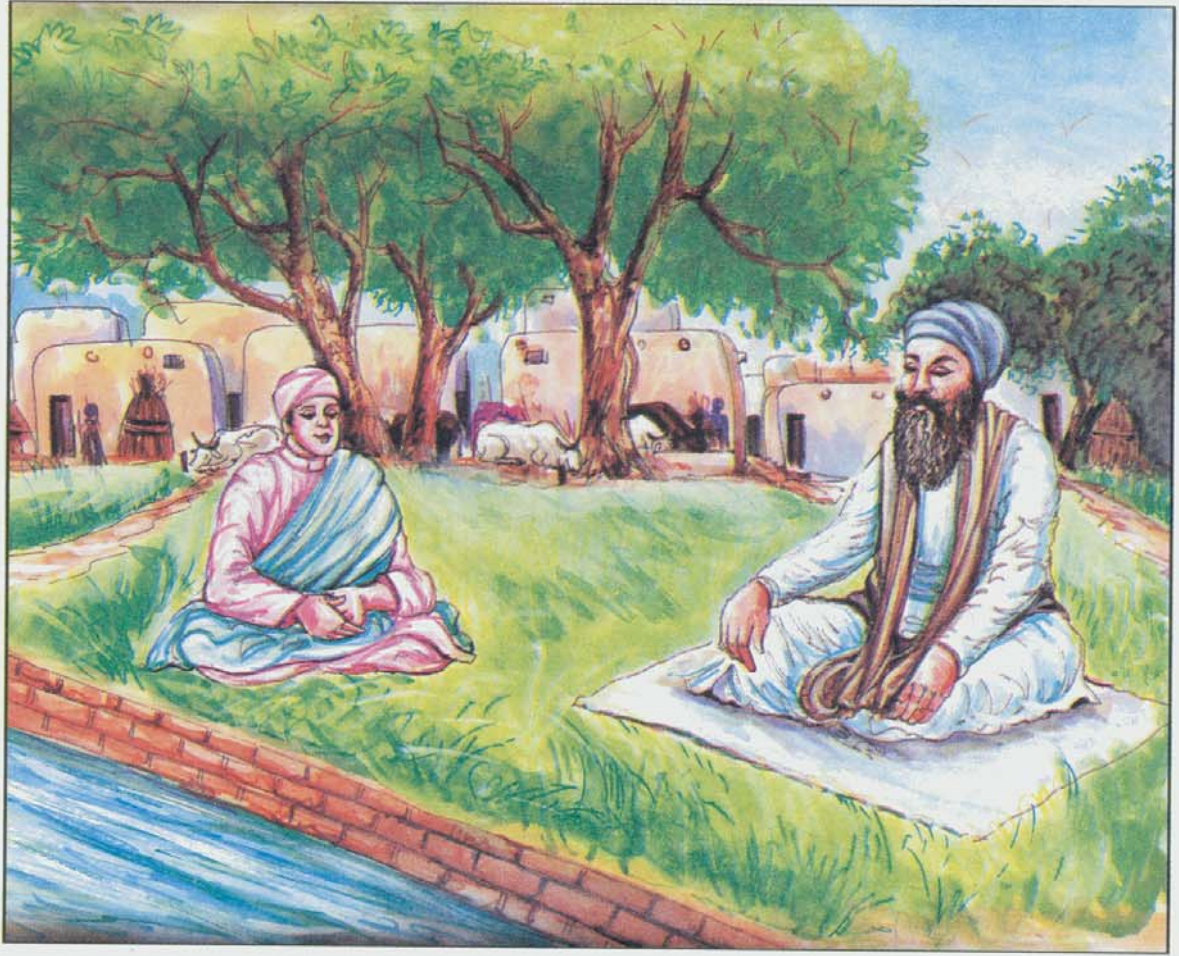
बाणी का प्रभाव

खडूर में देवी के भक्तों ने जागरण का आयोजन किया। रात भर देसी घी की जोत जलती रही और देवी के श्रद्धालु माता की भेटें गाते रहे। सुबह होने पर भाई लहिणा जी स्नान करने के लिए गांव के तालाब की ओर जा रहे थे तभी उनके

कानों में किसी की मीठी बाणी की आवाज सुनाई दी। आप उसी ओर चल पड़े जिधर से आवाज आ रही थी। तालाब के किनारे गुरु नानक देव जी का एक शिष्य (सिक्ख) भाई जोधा 'आसा दी वार' की यह पउड़ी बड़ी मीठी और सुरीली आवाज में पढ़ रहा था–'जितु सेविऐ सुखु पाईऐ जो साहिबु सदा समालीऐ।। जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ।।' (अंक 474) 'जिस मालिक का स्मरण करने से सभी सुख मिलते हैं, उसे सदा याद रखना चाहिए' यदि मनुष्य ने अपने कर्मों का फल खुद ही भोगना है तो फिर बुरे काम क्यों किये जाएँ? बुरा काम भूलकर भी नहीं करना चाहिए। गहरी (विचार वाली) नज़र से देख लें (कि इसका परिणाम क्या होगा) वैसी चाल फिर हम क्यों चलें। भाव यह है कि हम ऐसा काम क्यों करें जिससे ईश्वर की ओर से हार मिले। इन्सान को सदैव ऐसे काम करने चाहिए जिससे प्रभु के साथ प्रीति बनी रहे।

भाई जोधा जी बाणी का पाठ करते जा रहे थे और भाई लहिणा जी मंत्रमुग्ध होकर, उनके पास बैठे अजीब-सा आनंद अनुभव कर रहे थे, उनके मन को ऐसी शांति मिल रही थी, जिसे उन्होंने अपनी कई यात्राओं में भी अनुभव नहीं किया था।

शब्द का भोग पड़ा। भाई जोधा जी ने आंखें खोलीं। भाई लहिणा जी उनके चरणों की ओर लपके और पूछने लगे–'आप किन की बाणी पढ़ रहे थे? मेरे मन को बहुत सुख और शांति मिली है।' भाई जोधा जी ने बताया कि यह बाणी गुरु नानक पातशाह की है जो आजकल करतारपुर (रावी किनारे, अब पाकिस्तान) में परमात्मा की जोत जगा कर कलियुगी जीवों का उद्धार कर रहे हैं। भाई लहिणा जी ने करतारपुर जाकर उनके दर्शन करने का मन बना लिया।

गुरु नानक देव जी से मुलाकात

इस बार भाई लहिणा जी देवी भक्तों का जत्था लेकर देवी दर्शनों के लिए चले तो वे रास्ते में करतारपुर रुक गये। देवी भक्तों का जत्था रात भर देवी की भेटों को गाता रहा। भाई लहिणा जी के मन में गुरु नानक देव जी से मिलने तथा उनके
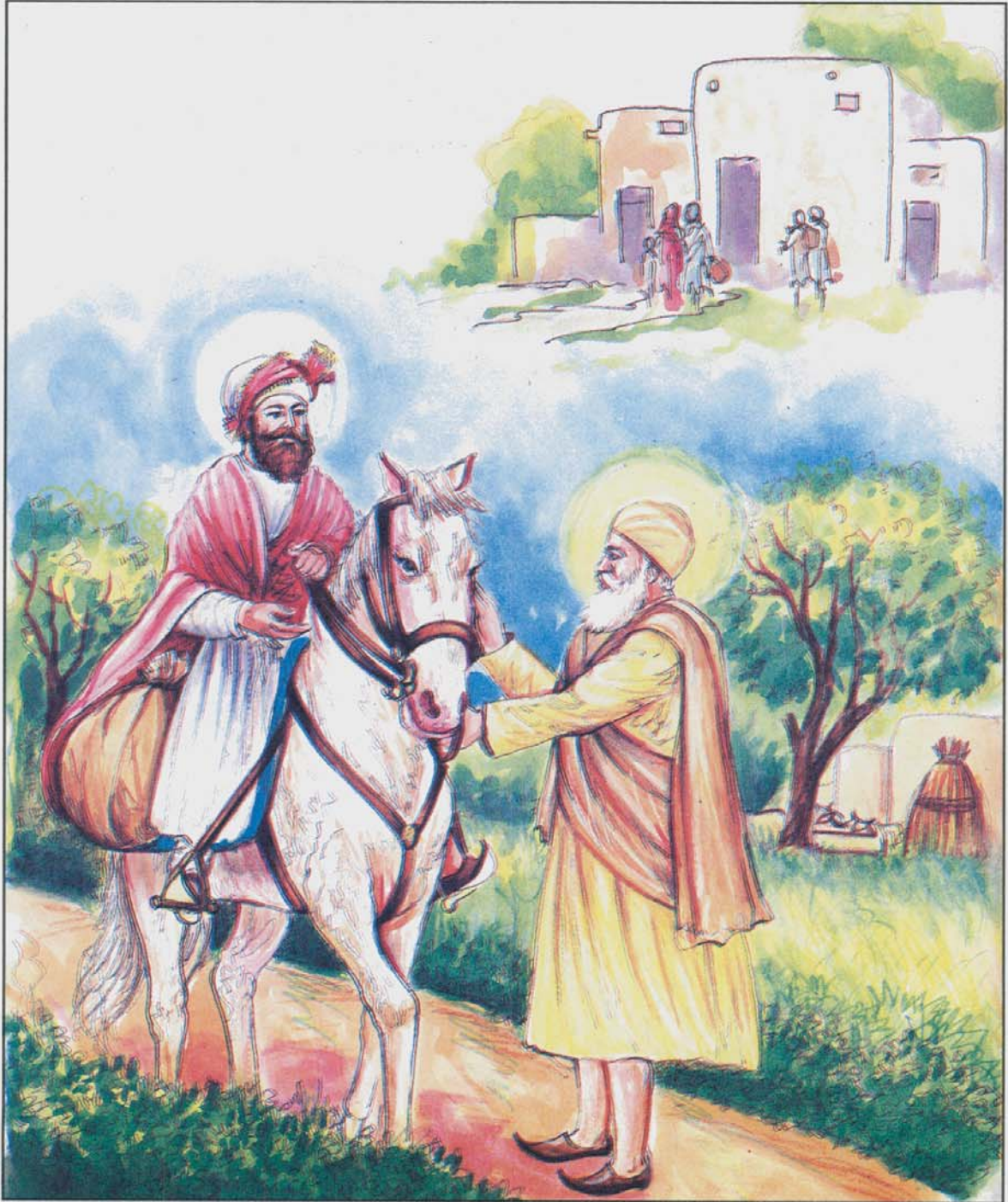
दर्शनों की उत्सुकता थी। सुबह होते ही वे घोड़ी पर सवार होकर नगर की ओर चल पड़े। उन्हें मार्ग में एक बुजुर्ग बाबा जी दिखाई दिए। भाई लहिणा जी ने उनसे गुरु नानक देव जी के दरबार का मार्ग पूछा। भाई लहिणा जी को क्या पता था कि जिनके दर्शनों के लिए वे करतारपुर आये हैं, वे ही उन्हें लेने के लिए आगे आ गये हैं। यह कैसा संयोग था। उस बुजुर्ग (बाबा नानक जी) ने भाई लहिणा से कहा–'मैं भी उधर ही जा रहा हूं। आप घोड़ी पर बैठे-बैठे मेरे पीछे-पीछे आ जाओ।' धर्मशाल के पास पहुंचकर बुजुर्ग बाबा जी ने भाई लहिणा को कहा कि वे घोड़ी को खूंटी से बांध कर अन्दर आ जाएं। यही वह स्थान है जिसका पता उन्होंने पूछा था। जितनी देर में भाई लहिणा जी घोड़ी को खूंटी से बांधकर अन्दर आते उतनी ही देर में गुरु नानक देव जी अपने आसन पर बिराजमान हो गये। अन्दर पहुंच कर जब भाई लहिणा जी ने माथा टेका तो वह यह देखकर हैरान रह गया कि जिस महापुरुष से उन्होंने गुरु नानक-दरबार का पता पूछा था यह तो वही नूर का फव्वारा था जो उन्हें गली से घर तक लेकर आया था। वे ही दीन दुनिया के पातशाह गुरु नानक देव जी थे। वे बार-बार अपनी भूल के लिए माफी मांग रहे थे कि वे सारा रास्ता घोड़ी पर बैठे रहे और गुरु जी उनके साथ पैदल चलते रहे। गुरु नानक देव जी ने सच की तलाश में आये उस जिज्ञासु से उनका नाम पूछा। भाई लहिणा जी ने बताया कि उनका नाम लहिणा है। गुरु जी भाई लहिणा की ओर प्रेम पूर्ण दृष्टि से देखकर मुस्करा दिये और कहने लगे–'आप लहिणा से भाव लेने वाले हो और हमने तुम्हारा कुछ देना है। इस सम्बंध में अधिक सोचने या निराश होने की कोई बात नहीं। लेने वाले सदा घोड़ियों पर चढ़ कर ही आते हैं।' गुरु जी की बात सुनकर भाई लहिणा जी की आंखों में आंसू बहने लगे। गुरु नानक जी ने उन्हें उठाया और कस कर अपने आलिंगन में ले लिया। इस प्रेम पूर्ण मिलन से भाई लहिणा को स्वर्गीय सुख का आनंद प्राप्त हुआ। ऐसे सुख का अनुभव जीवन में अब तक उन्होंने पहले नहीं किया था। उन्होंने देवी भक्तों के जत्थे को जाकर कह दिया कि वे बेशक आगे चले जाएँ। उन्हें जिस आश्रय की खोज थी, उन्हें वह आश्रय गुरु नानक देव जी के चरणों में मिल गया है।

केसर के छींटे

भाई लहिणा जी कुछ दिन करतारपुर गुरु नानक देव जी की संगति में रह कर खडूर वापस लौट आए। वे शीघ्र ही अपने घर–बार तथा कारोबार की जिम्मेदारी अपने दोनों बेटों (दासू तथा दातू) को सौंप करतारपुर चले जाना चाहते थे। अब खडूर में उनका मन नहीं लग रहा था। हर समय उनका ध्यान गुरु नानक के चरणों में ही लगा रहता। बाबा नानक से एक ही मिलन ने उनका जीवन ही बदल दिया था। कुछ समय खडूर रहकर, अपने घर परिवार की जिम्मेदारियां माता खीवी तथा अपने बच्चों को सौंप कर वे करतारपुर वापस आ गये। खडूर से चलते समय उन्होंने अपने सिर पर सवा मन नमक की गांठ उठाई हुई थी। यह नमक वे गुरु के लंगर के लिए लाये थे। नमक की गांठ लंगर में रख कर उन्होंने गुरु नानक देव जी के बारे में पूछा। पता लगा कि गुरु जी धान के खेतों में घास–फूस

निकालने के लिए गये हुए हैं। पता चलते ही लहिणा जी वहां चले गये। गुरु जी के पास ही घास की बंधी हुई गांठ पड़ी थी। घास गीला था तथा गांठ में से कीचड़ वाला पानी बह रहा था। गुरु नानक देव जी ने भाई लहिणा को वह गांठ उठाने का आदेश दिया और कहा–'इसे हमारे निवास स्थान पर ले चलो। वहां गाएं तथा भैंसें चारे की प्रतीक्षा कर रही हैं।'

भाई लहिणा जी ने नए तथा रेशमी कपड़े पहने हुए थे। भाई लहिणा जी ने अपने नए कपड़ों की परवाह किए बिना गुरु जी का आदेश मानते हुए वह गांठ उठा ली और गुरु जी के निवास स्थान पर ले आए। अब गुरु नानक देव जी खेतों से लौटे और घर पहुंचे तो माता सुलक्खणी जी ने कहा–'आपने बाहर से आए एक शरीफ तथा सुशील व्यक्ति से घास की गांठ उठवा कर क्यों भेजी है। उनके नए कपड़े कीचड़ वाले पानी से लथपथ हो गए हैं। आपको इस तरह नहीं करना चाहिए था। माता सुलक्खणी की बात सुनकर गुरु नानक देव जी मुस्करा पड़े और कहने लगे–'यह कीचड़ नहीं ये तो केसर के छींटे हैं। यह गांठ कोई अन्य नहीं उठा सकता था, इसीलिए हमने उनसे उठवाई है। यह मेरा राजयोग का धनी है। इसके सिर पर छत्र झूलेगा।' गुरु जी के वचनों में गूढ़ रहस्य था जो हर कोई नहीं समझ सकता था। यह संकेत उस बड़ी जिम्मेदारी की ओर था जो गुरु नानक देव आने वाले समय में भाई लहिणा जी को सौंपना चाहते थे।

करतार पुर में

भाई लहिणा जी करतार पुर में आते ही गुरु जी तथा संगत की निष्काम सेवा में जुट गए। आप पहर रात रहते ही उठ जाते, स्नान करते और फिर उन बाणियों का पाठ करते जिनकी रचना गुरु बाबा ने की थी। दिन चढ़ते ही संगत में आकर गुरु नानक देव जी के उपदेश तथा बाणी (शब्द) सुनते और उन्हें कंठस्थ कर लेते। बाहर से आई संगत के सुख-आराम का ध्यान रखते और लंगर में जाकर जूठे बर्तन मांजने की सेवा करते। आप धीरे-धीरे उन बातों का त्याग कर रहे थे, जिन्हें पृथ्वी के लोग पंच विकार कहते हैं। सेवा और सिमरन (स्मरण) की भावना ने आपके बीच धैर्य, संतोष तथा नम्रता के गुणों को शिखर पर पहुंचा दिया था। अपने गुरु के आदेश की पालना करना आपके जीवन का प्रमुख उद्देश्य बन गया था। आप गुरु जी की आज्ञा मानने में कभी ढील नहीं करते थे। गुरु जी जो भी आदेश देते आप सत्य वचन कह कर उसकी पालना करने में लग जाते। आप गुरु नानक देव जी तथा संगत की सेवा करने में सदा तत्पर रहते थे। सेवा करके आप का मन एक अगम्य आनंद से भर जाता। आप धीरे-धीरे वे सभी गुण ग्रहण कर रहे थे, जिसके लिए गुरु नानक देव जी ने निर्मल पंथ (अर्थात सिक्ख धर्म) की स्थापना की थी। थोड़े समय में ही आप गुरु नानक देव जी के प्रमुख शिष्यों (सिक्खों) में गिने जाने लगे।
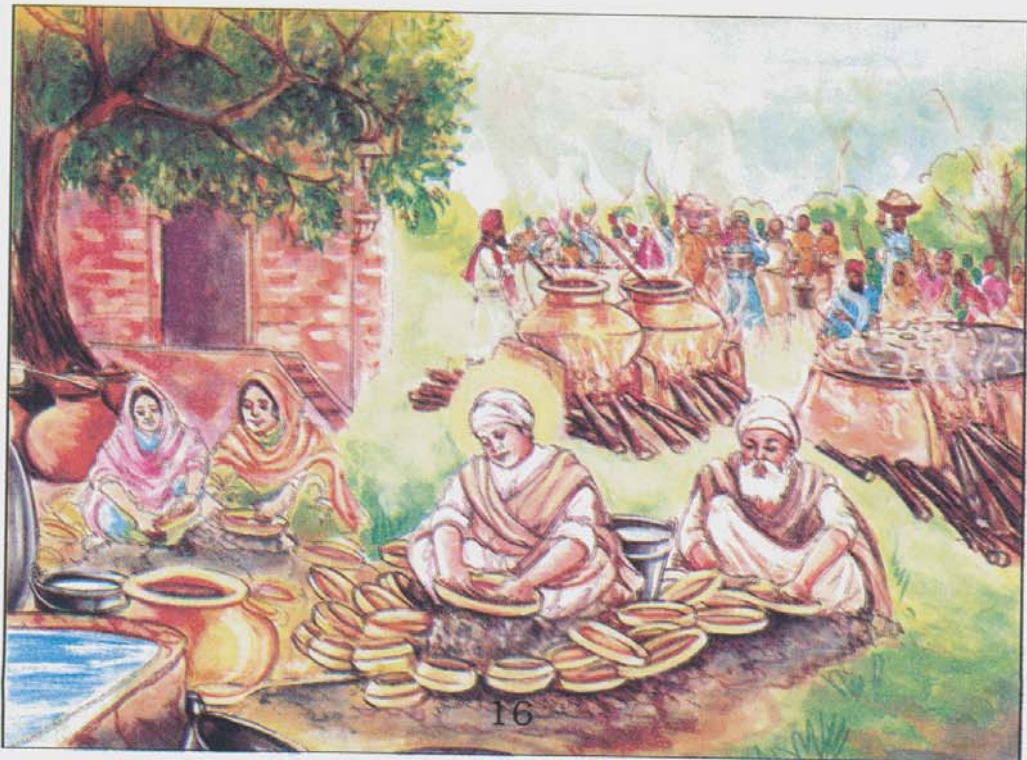
गंदे नाले में से कटोरा निकालना

करतार पुर में रहते हुए भाई लहिणा जी के जीवन में अनेक घटनाएँ घटित हुईं, जिन्हें साखियों के रूप में सिक्ख इतिहास में सम्मिलित किया गया है। इन साखियों में भाई लहिणा जी की गुरु के प्रति श्रद्धा, उनकी विनम्रता, गुर सिक्खी के लिए प्रेम तथा सादगी जैसे गुण उभरते हैं।

गुरु नानक देव जी का यह प्रतिदिन का नियम था कि वे अमृत समय, सवा पहर रात रहते उठते थे और रावी नदी में स्नान करने चले जाते थे। इसके उपरान्त दिन चढ़ने तक बाणी का पाठ करते तथा अकाल पुरुष (परमात्मा) के सिमरन (स्मरण) में जुड़ जाते।
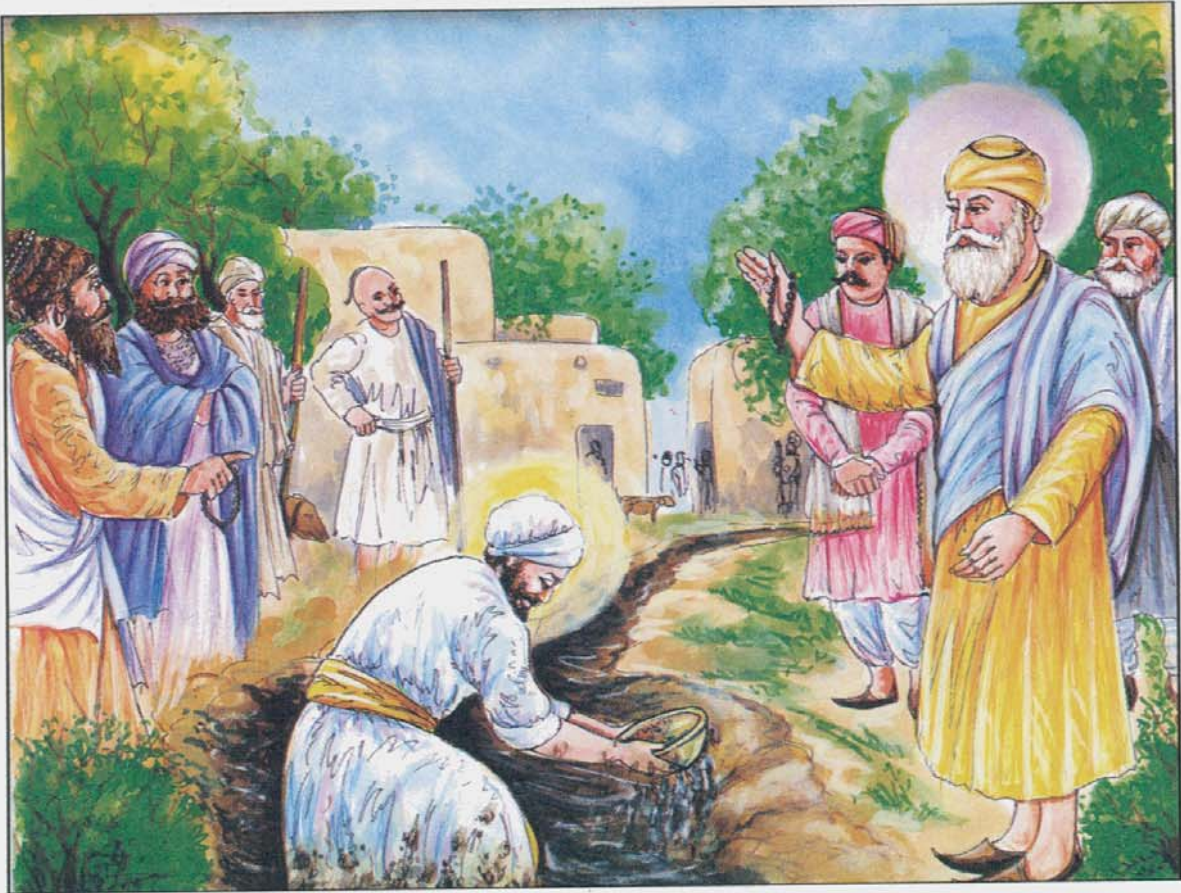
एक बार गुरु नानक देव जी केशी स्नान (बाल धोकर) करके अपने निवास स्थान की ओर लौट रहे थे। उनके हाथ में दही का खाली कटोरा था। कुछ शिष्य भी उनके साथ थे। रास्ते में एक गंदे नाले को पार करते समय वह कटोरा गुरु जी के हाथ से छूटकर नाले में गिर गया। नाले का पानी गंदा और बदबूदार था। गुरु जी ने बारी-बारी अपने बेटों तथा शिष्यों से कटोरा निकालकर लाने के लिए कहा। किसी ने कहा-'गंदे नाले से कटोरा निकालने की क्या आवश्यकता है। दिन चढ़ते ही नया कटोरा ले आयेंगे।' किसी ने कहा-'यह काम तो मेहतर या भंगी (अर्थात निम्न जाति के लोगों) का है। सुबह उन्हें बुला कर कटोरा निकलवा लेंगे।' गुरु जी के बार-बार कहने पर भी उनमें से किसी ने भी नाले में से कटोरा निकालने की हिम्मत नहीं की। उन दिनों में भारतीय समाज को विभिन्न वर्ण तथा जातियों में बांटा जाता था। राजपूतों का काम लड़ना-मरना, वैश्य तथा क्षत्रियों का काम खेती तथा व्यापार करना तथा निम्न स्तर के काम तथा सेवा शूद्र करते थे। घरों का कूड़ा-करकट तथा मल-मूत्र उठाने का काम भंगी (चूहड़े) करते थे। इसीलिए गुरु जी के पुत्र तथा शेष शिष्य गंदे नाले में जाने के लिए तैयार नहीं हुए थे। पर यही काम जब गुरु नानक देव जी ने भाई लहिणा जी को दिया तो वे तुरन्त नाले में उतर गए। उन्होंने गंदे नाले से कटोरा निकाल कर, मांज धोकर, स्वच्छ करके गुरु नानक देव जी को भेंट किया। वास्तव में गुरु नानक देव जी देख रहे थे कि कौन-सा शिष्य (सिक्ख) जाति-वर्ण तथा छुआ-छूत के बंधनों से मुक्त होकर प्रत्येक को एक समान प्यार तथा आदर दे सकता है। और इस परीक्षा में भाई लहिणा जी सफल सिद्ध हुए थे।

धर्मशाल की दीवार का निर्माण

सर्दियों के दिन थे। बहुत जोर की ठंड पड़ रही थी। आकाश में बादल घिर आये थे। वर्षा होनी प्रारम्भ हो गई थी। अधिक पानी गिरने से धर्मशाल की एक दीवार गिर गई। रात का समय था। गुरु जी ने अपने बेटों तथा कुछ शिष्यों को बुलाया। उन्होंने बारी-बारी से सभी को दीवार बनाने के लिए कहा। बाबा श्री चंद तथा लखमी चंद जी कहने लगे-'रात का समय है। तेज बरसात हो रही है। सुबह होगी तो किसी राज-मिस्तरी को बुलाकर यह दीवार बनवा लेंगे।' गुरु जी ने एकत्रित शिष्यों से भी कहा कि गिरी हुई दीवार को अभी बना दिया जाए। पर उन्होंने भी कहा कि बहुत ठंड है। रात का समय है। इस समय दीवार बनाने के लिए सामान मिलना भी कठिन है। सुबह होते ही हम इस दीवार को बना देंगे। जब गुरु जी ने यही आदेश भाई लहिणा जी को दिया तो वह सत्य वचन कह कर अकेले ही दीवार बनाने में जुट गए। सुबह होने तक काम करते रहे और दीवार का काम पूरा कर दिया। यह सच्चे गुरु, गुरु नानक देव जी के आदेश का पालन करने का एक और उदाहरण था, जिसमें भाई लहिणा जी खरे उतरे थे।
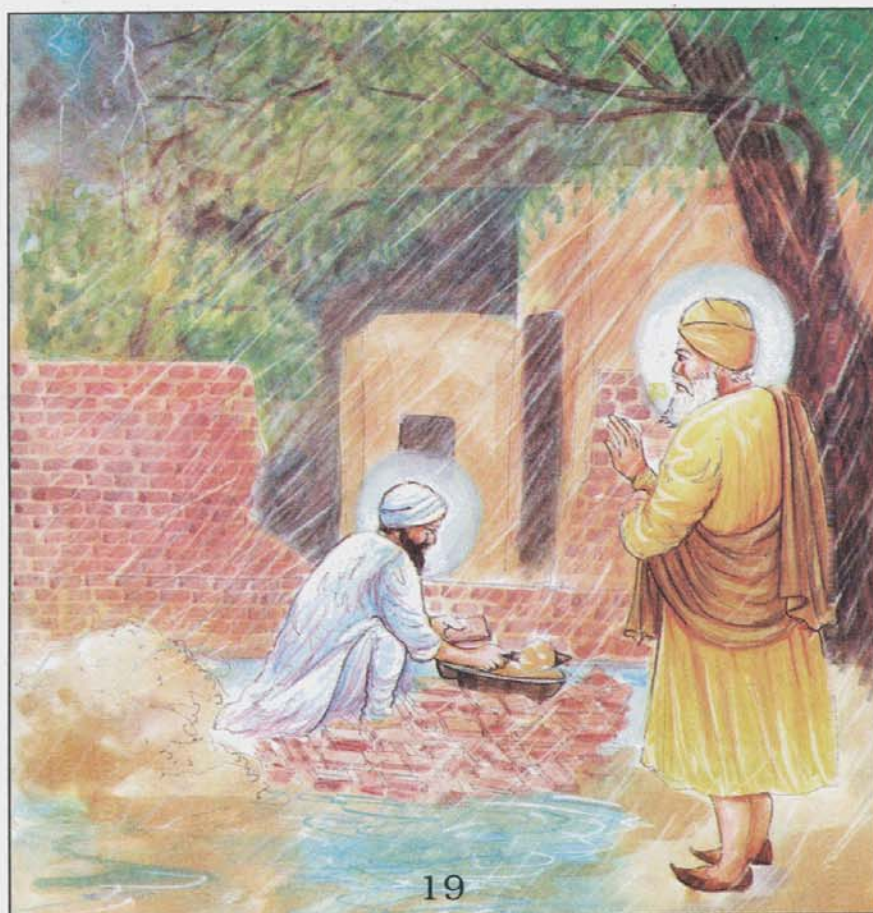
मैले वस्त्रों को धोना

अन्धेरी रात थी। हर तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। सभी सिक्ख सेवक सोये हुए थे। गुरु नानक देव जी उठे और कहने लगे कि हमारी चादर मैली हो गई है। इसे अभी धोकर ले आओ। गुरु जी का यह आदेश सुनकर सभी हैरान थे। पर किसी में भी हिम्मत नहीं थी कि वह अन्धेरी रात में रावी नदी के किनारे चादर धोने के लिए जाए। गुरु जी ने जब यह आदेश अपने बेटों को दिया तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि यह काम धोबी (कपड़े धोने वाले) करते हैं। सुबह होने पर किसी धोबी को बुलाकर आपकी चादर तथा अन्य वस्त्र धुलवा देंगे। सिक्ख सेवकों ने भी इस आदेश को मानने में टाल मटोल की और कहा कि सुबह होने पर वे नदी पर जाकर उनके मैले कपड़े धोकर ले आएंगे। पर जब यही आदेश भाई लहिणा जी को दिया गया तो वे गुरु जी के मैले वस्त्र लेकर नदी की ओर चल पड़े। यह उनका

उनका स्वभाव था कि उन्होंने कभी भी गुरु नानक देव जी के समक्ष प्रश्न करने या इन्कार करने की अवज्ञा नहीं की थी। वे कहा करते थे कि स्वामी का काम आदेश देना है तथा सेवक का कर्तव्य आदेश की पालना करना है। मैं तो गुरु जी का एक तुच्छ सेवक हूं। मेरा काम गुरु जी के आदेश के प्रति किन्तु-परन्तु करना नहीं है। मेरा कर्तव्य तो गुरु जी के आदेश की पालना करना है। मुझे तो इसी में खुशी मिलती है।

वास्तव में गुरु जी देख रहे थे कि आने वाले समय में इस नव-सृजित जत्थेबंदी और भाईचारे (सिक्ख धर्म) का उत्तराधिकारी किसे बनाया जाए। जिसमें विनम्रता हो, सहनशीलता हो तथा दृढ़ता हो। अपने आदर्श के प्रति सच्ची लगन तथा मनुष्य मात्र के लिए प्यार हो। जिसके मन में छुआ-छूत और ऊंच-नीच की भावना से ऊपर उठकर सर्व-सांझेपन की भावना हो। जितनी बार भी गुरु नानक देव जी ने अपने पुत्रों तथा शिष्यों के समक्ष कोई नई परीक्षा रखी थी, भाई लहिणा जी हर बार उसमें पूरे उतरते थे। गुरु नानक देव जी ने उन्हें अपना उत्तराधिकारी बनाने का निर्णय ले लिया था।

गांव संघर-खडूर जाना

भाई लहिणा जी को करतारपुर में रहते हुए तीन साल हो गए थे। उनकी सेवा तथा गुरु घर के लिए पूर्ण समर्पण की भावना से सभी प्रभावित थे। गुरु नानक देव जी यह नहीं चाहते थे कि उनका शिष्य (भाई लहिणा) घर-बार त्याग कर उदासी बन जाए। उनका वचन था कि गृहस्थ रहते हुए भी आवागमन के चक्र से मुक्त हुआ जा सकता है। (गुरु ग्रंथ जी, पृष्ठ 661) बाबा नानक जी अपने शिष्यों को यही समझाना चाहते थे। उन्होंने भाई लहिणा जी से कहा कि आपको अपना घर छोड़े बहुत समय हो गया है। अपने घर जाकर अपने घर परिवार की खबर लो। भाई लहिणा जी गुरु जी का आदेश मान कर कुछ समय के लिए अपने घर आ गए। गांव संघर में अपनी ससुराल के लोगों से तथा खडूर में अपने घर-परिवार के लोगों से मिले। घर परिवार वाले भाई लहिणा जी को काफी समय के बाद मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। पर भाई लहिणा जी का मन तो करतारपुर में ही गुरु नानक देव जी के चरणों में लगा हुआ था। वे वापस करतारपुर जाने के लिए व्याकुल थे। घर वाले उन्हें खडूर में ही टिक जाने के लिए ज़ोर डाल रहे थे। पर गुरु चरणों में मुग्ध भाई लहिणा जी परिवार का मोह त्याग कर फिर करतारपुर लौट आए। करतारपुर आते ही वे फिर सेवा, स्मरण तथा बंदगी में जुड़ गए। बीच-बीच में वे अपने गांव का चक्कर लगा आते थे। पर उनका सचखंड (रूहानी मंडल) तो वही था जहां उनका गुरु (बाबा नानक) टिका हुआ था।

अन्तिम परीक्षा

सिक्ख इतिहास में और भी कई साखियों का वर्णन मिलता है जो भाई लहिणा जी के जीवन के साथ संबंधित हैं।

एक बार गुरु नानक देव जी ने बड़ा डरावना रूप धारण कर लिया। उन्होंने सांसियों जैसे मैले-कुचैले कपड़े पहन लिए। कमर के आसपास रस्से लपेट लिये तथा हाथ में मोटा-सा डंडा पकड़ लिया। उनके कंधे पर कुछ थैले थे जिनमें कांसा, चांदी तथा सोने के सिक्के भरे हुए थे। वे ऐसा रूप धारण करके रावी नदी की ओर चल पड़े। बहुत से शिष्य भी गुरु जी के साथ थे। वे हैरान थे कि आज गुरु जी को क्या हो गया है। बहुत से शिष्य तो उनका यह डरावना रूप देखकर वापस लौट गए। साथ-साथ आ रहे शिष्यों को भी गुरु जी ने कहा 'आप भी लौट जाओ।' पर वे गुरु जी के पीछे-पीछे चलते रहे। गुरु जी ने अपने कंधे से एक थैला उतार कर उसमें से कांसे के सिक्के फेंकने प्रारम्भ कर दिए। बहुत से शिष्य उन सिक्कों को इकट्ठा करने में लग गए और अपनी जेबें भरकर वापस लौट गए। आगे चल कर गुरु जी ने चांदी के सिक्के फेंकने प्रारम्भ कर दिये और फिर

सोने के सिक्के। गुरु जी की ओर से फेंकी गई इस सांसारिक माया को सम्भालते हुए बहुत से शिष्य गुरु जी का साथ छोड़ गए। अब उनके साथ चलने वालों में थोड़े से शिष्य ही रह गए थे। गुरु जी ने उन्हें भी लौट जाने के लिए कहा। जब वे वापस नहीं लौटे तो उन्होंने हाथ में पकड़े हुए डंडे से उन्हें मारना प्रारम्भ कर दिया। इस घटना के बाद अब भाई लहिणा जी को छोड़कर बाकी सभी शिष्य अपने घरों को लौट गए थे। जब भाई लहिणा जी अकेले रह गये तो गुरु जी ने पूछा–हे शिष्य (सिक्ख) और तो सभी चले गए हैं तुम क्यों नहीं जाते।' तब भाई लहिणा जी हाथ जोड़ कर खड़े हो गए और कहने लगे–'सच्चे पातशाह, उन सभी का कोई न कोई टिकाना (आश्रय) होगा। पर दीन–दुनिया के पातशाह मेरा तो आपके बिना कोई भी नहीं। मैं कहां जाऊं?' थोड़ा–सा आगे गए तो सफेद चादर के नीचे एक मुर्दा पड़ा था। वास्तव में यह भी गुरु नानक देव जी द्वारा रचा हुआ एक कौतुक था। वे भाई लहिणा जी से कहने लगे कि यदि आपने मेरे साथ रहना है तो इस मुर्दे को खाओ। भाई लहिणा जी ने बिना किसी हिचकिचाहट या प्रश्न किये गुरु जी से पूछा–'सच्चे पातशाह मैं इस मुर्दे को सिर की तरफ से खाऊं या पैरों की तरफ से।' गुरु जी ने कृपा दृष्टि से भाई लहिणा जी की ओर देखा और कहने लगे–'बीच में से खाओ'। यह गुरु जी का किया हुआ ही था कि जब लहिणा जी ने मुर्दे से सफेद चादर हटाई तो वहां कड़ाह प्रसाद (हलुवा) की देग पड़ी थी। गुरु जी ने आगे बढ़ कर लहिणा जी को अपने आलिंगन में ले लिया और कहा कि 'आज से तू मेरा अंग हुआ। उसी समय उन्होंने फैसला कर लिया कि उनकी गद्दी का वास्तविक अधिकारी भाई लहिणा ही है। उन्होंने देख लिया था कि भाई लहिणा केवल सेवा, सिमरन, सिदक में ही खरा नहीं उतरा बल्कि उन्हें सांसारिक पदार्थों का भी कोई लोभ नहीं था। वे धन–दौलत के मोह जाल से ऊपर उठ गये थे। उनके मन में सांसारिक शक्तियों का भी कोई भय नहीं था, बल्कि वे अपने उद्देश्य तथा आदर्श पर स्थिर रहे थे। उन्हें गुरु गद्दी के उत्तरदायित्व के लिए ऐसा ही उत्तराधिकारी चाहिए था जो उनके मिशन को आगे ले जा सके तथा इस चयन में भाई लहिणा जी ही सफल होकर आगे आए थे।

गुरुगद्दी

गुरु नानक देव जी ने सितम्बर 1539 में परम तत्व में विलीन होने से कुछ माह पूर्व ही यह घोषणा कर दी थी कि उनके बाद गद्दी का अधिकारी भाई लहिणा जी होंगे। उन्होंने भाई लहिणा जी का नाम अंगद रखा अर्थात जो उनके अपने ही अंग से उत्पन्न हुआ था। गुरु जी को गुरु गद्दी सौंपने की जिम्मेदारी की घटना कुछ माह पूर्व (सम्वत् 1595) में घटित हुई। गुरु नानक देव जी ने भाई लहिणा को अपने आसन पर बैठा कर उनके समक्ष मस्तक झुका दिया। उन्होंने संगत को सम्बोधित करते हुए कहा कि आज से आप भाई लहिणा (गुरु अंगद) को मेरा रूप ही समझना। इनके हृदय में अब मैं ही निवास करता हूं। गुरु घर में कीर्तन करने वाले सता तथा बलवंड अपनी वार में लिखते हैं (गुरु ग्रंथ जी, पृष्ठ 966) कि गुरु नानक देव जी ने अपनी काया पलट कर अपनी ज्योति गुरु अंगद देव जी के हृदय में स्थापित कर दी।
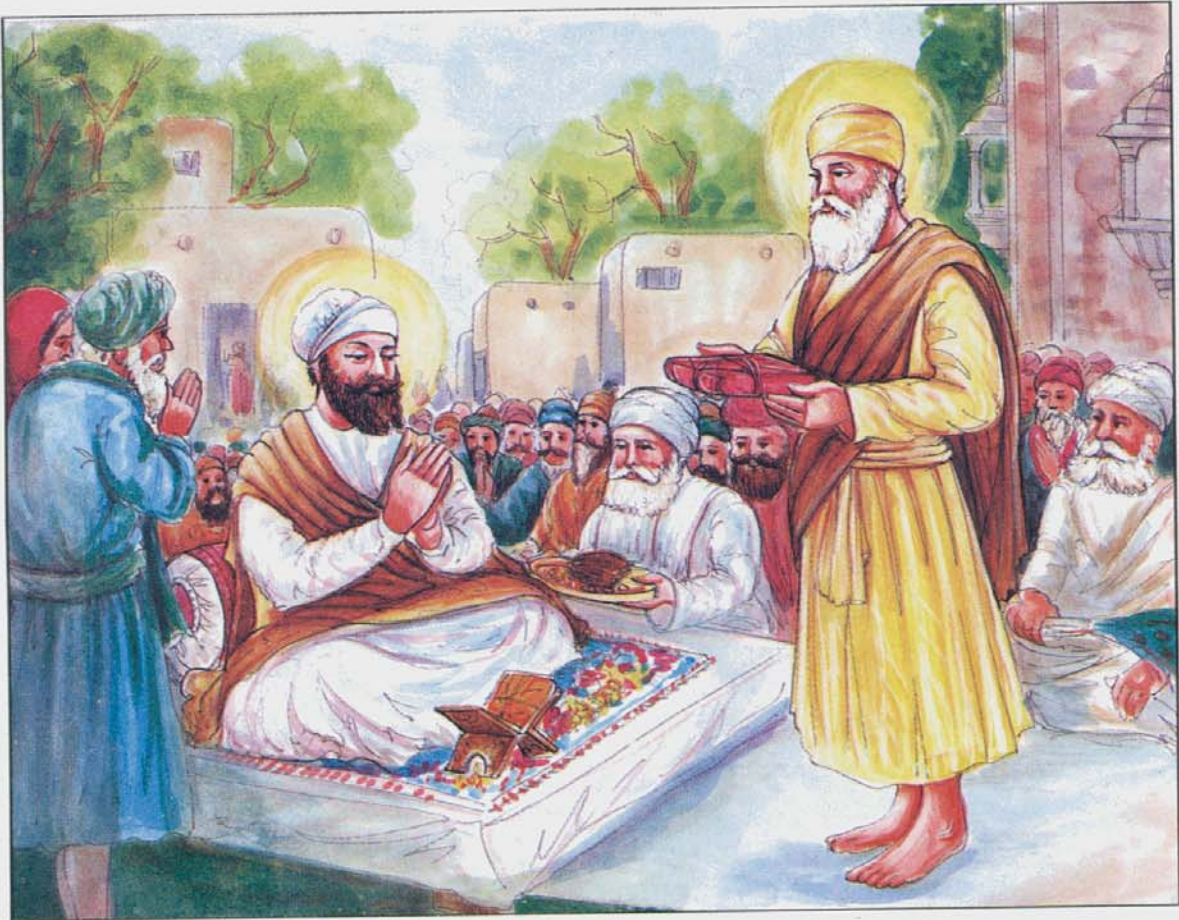
जोति ओहा जुगति साइ, सहि काइआ फेरि पलटीऐ।

(सते बलवंत की वार अंक 966)

सिक्ख धर्म के महान विद्वान तथा गुरु घर के प्रमुख सिक्ख भाई गुरदास जी भी लिखते हैं कि गुरु नानक देव जी ने अपने जीते जी गुरुगद्दी का छत्र गुरु अंगद देव जी के सिर पर झुलाकर उनके आगे अपना मस्तक झुका दिया।

थापिआ लहिणा जीवदे, गुरिआई सिरि छत्र फिराई आ।
जोति जोति मिलाइ कै, सतिगुर नानक रूप वटाइआ।

(वार पहिली, पउड़ी 45)

गुरुगद्दी देते समय गुरु नानक देव जी ने वह पोथी भी गुरु अंगद देव जी को सौंप दी जिसमें उनके द्वारा रचित रूहानी बाणी संकलित थी (पुरातन जन्म साखी)। गुरु गद्दी की सेवा मिलते समय गुरु अंगद देव जी की आयु केवल 35 साल थी। गुरु नानक देव जी ने आदेश दिया कि अब आप करतारपुर छोड़ कर खडूर चले जाना और वहां रह कर सिक्ख मत का प्रचार करना। आदेश मान कर गुरु अंगद देव जी खडूर आ गये जहां रह कर उन्होंने तेरह साल तक सिक्ख धर्म का नेतृत्व किया तथा इस धर्म की जड़ों को और मजबूत कर दिया।

माई विराई

करतारपुर छोड़ते समय गुरु अंगद देव जी बहुत उदास थे। वे गुरु नानक देव जी से बिछुड़ना नहीं चाहते थे। पर स्वामी का आदेश था। उसे कैसे टाल सकते थे? खडूर आकर वे कुछ समय एकान्त में रहना चाहते थे। गांव खडूर में एक माई रहती थी जिसका नाम विराई अथवा सभराई था। वह सराय नांगा के जमींदार तख्तमल की पुत्री थी और संघर में महिमा चौधरी के साथ उसका विवाह हुआ था। सात भाइयों की अकेली बहन होने के कारण उसे सतभराई भी कहते थे। धीरे-धीरे यही नाम बदल कर सभराई अथवा विराई बन गया। इसी माई ने ही गुरु अंगद देव जी का विवाह संघर के निवासी भाई देवी चंद की सुपुत्री बीबी खीवी जी के साथ करवाया था। एक बार जब गुरु नानक देव जी संघर आए थे तो आप माई विराई के घर ही ठहरे थे।

करतारपुर से आ जाने के बाद गुरु अंगद देव जी माई विराई के घर गये और कहने लगे–'हम कुछ समय एकान्त में रहना चाहते हैं। हमारे यहां आने की किसी को खबर नहीं होनी चाहिए।' माई विराई ने अपने घर का एक कमरा साफ करके उसके अन्दर गुरु जी का आसन बिछा दिया। जिस कमरे में गुरु जी ने एकान्त वास किया उसके बाहर ताला लगा दिया। यदि उससे कोई गुरु जी के बारे में पूछता तो माई विराई स्पष्ट उत्तर देने के स्थान पर बात को टाल जाती। यहां तक कि जब माता खीवी तथा गुरु अंगद देव जी के सुपुत्र भी माई विराई से पूछने आए तो उसने उन्हें भी टाल दिया।

अपने एकान्त वास के समय गुरु अंगद देव जी थोड़ा खाते और थोड़ा सोते थे। हर समय स्वामी (परमात्मा) की याद में लीन रहते थे। उनका ध्यान हर समय गुरु नानक देव जी के चरणों में जुड़ा रहता था। बेशक माई विराई उनके सुख आराम का पूरा ध्यान रखतीं थीं, पर गुरु अंगद देव जी आठ पहर में केवल एक बार ही कच्चे आटे की बिन चुपड़ी रोटी खाकर भजन-बंदगी में लीन रहते थे।

गुरु जी का प्रकट होना

गुरु जी को परम तत्व में लीन हुए लगभग छह महीने हो गये थे। संगत व्याकुल थी। किसी को कुछ भी पता नहीं चल रहा था कि करतारपुर छोड़ कर गुरु अंगद देव जी कहां चले गये। गुरु नानक देव जी के बड़े सुपुत्र बाबा श्रीचंद ने गुरु पिता के शरीर त्यागने के उपरान्त उदासी मत का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया था। सिक्ख धर्म में गृहस्थ जीवन के उत्तरदायित्व से मुंह मोड़ कर उदास धारण करने या त्यागी बन जाने के लिए कोई स्थान नहीं। संगतें गुरु अंगद देव जी का दर्शन करने करतारपुर जाती थीं, पर उन्हें निराश ही लौटना पड़ता था। गुरु अंगद देव जी अपने परिवार घर खडूर में भी नहीं थे।

अन्त में सिक्ख संगतें रमदास (जिला अमृतसर) बाबा बुड्ढा जी के पास पहुंची। वे गुरु नानक देव जी के समय से ही प्रमुख सिक्खों में से एक थे। उन्होंने ही गुरु अंगद देव जी को गुरुगद्दी का तिलक लगाया था। संगतों ने बाबा बुड्ढा जी से विनती की कि 'आप गुरु अंगद देव जी को ढूंढ कर उन्हें गुरुगद्दी की जिम्मेदारियां सम्भालने की विनती करें। संगतें बहुत व्याकुल तथा निराश हैं और गुरु का नेतृत्व न मिलने के कारण उनके भटक जाने का भय है।' संगतों की विनती सुनकर बाबा बुड्ढा जी पांच प्रमुख सिक्खों को साथ लेकर खडूर साहिब
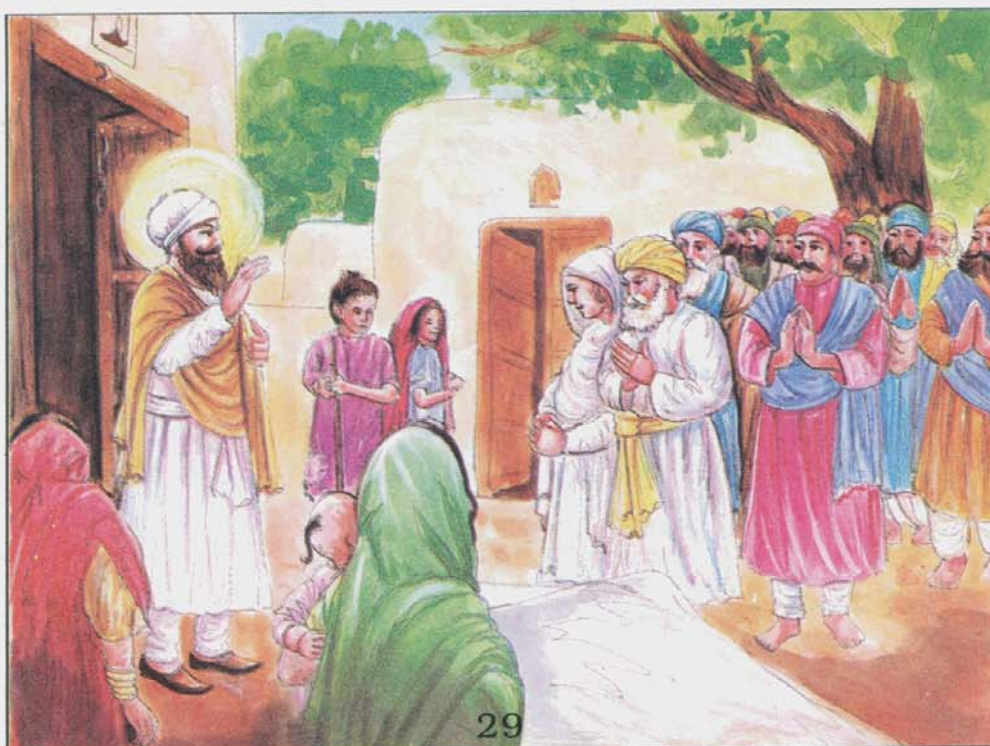
की ओर चल पड़े। आप जानते थे कि गुरु नानक देव जी ने परम तत्व में लीन होने से पूर्व गुरु अंगद देव जी को यह आदेश दिया था कि अब वे करतारपुर छोड़ कर खडूर चले जाएं और माझे के क्षेत्र में सिक्ख धर्म का प्रचार करें। गुरु नानक देव जी जानते थे कि यदि गुरु अंगद देव जी करतारपुर रहे तो उन्हें बाबा श्रीचंद तथा लख्मी चंद के विरोध को झेलना पड़ेगा, क्योंकि वे गुरु बाबा (गुरु नानक देव जी) के फैसले से खुश नहीं थे। वे समझते थे गुरु नानक की संतान होने के कारण गुरु गद्दी पर उनका ही अधिकार बनता था। भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में गुरु जी के पुत्रों के 'कौल न पालने' का उल्लेख किया है। बाबा श्रीचंद और लख्मी चंद यह रहस्य नहीं समझ सके थे कि गुरुगद्दी विरासत में मिलने वाली कोई जमीन-जायदाद नहीं है। यह तो ज्योति का प्रकाश है जो गुरु बाबा ने भाई लहिणा के हृदय में स्थापित करके उन्हें अंगद बना दिया है।

बाबा बुड्ढा जी के साथ जो पांच सिक्ख खडूर आये, वे थे भाई अजित्ता रंधावा, भाई धीरो जी, भाई बूड़ा कलाल, भाई भगीरथ आनंद तथा भाई साधारण जी। गुरु सिक्खों की यह टोली ढूंढ़ते हुए माई भराई (विराई) के घर खडूर पहुंच गई। जब भाई बुड्ढा जी ने गुरु जी की परम प्रिय माई से गुरु जी का टिकाना पूछा तो वह टाल गई। पर एक कमरे को ताला लगा देख कर तथा पीछे किये हुए लेप को देखकर बाबा बुड्ढा जी समझ गए कि गुरु अंगद देव पातशाह यहीं ही हैं। उन्होंने अपने हाथ से दरवाजे के बाहर लगे लेप को उतारा और दरवाजा खोलकर अन्दर चले गए। अंदर प्रवेश करते ही एक अगम्य नूर की चमक पड़ी। एक तख्तपोश पर गुरु अंगद देव जी समाधि में लीन गुरु नानक के रूप में दिखाई दिए। बाबा बुड्ढा जी तथा उनके साथ आई संगत उनके चरणों पर गिर पड़ी। बाबा बुड्ढा जी ने हाथ जोड़कर विनती की-'दाता! संगतें, सिक्ख सेवक आपके वियोग में व्याकुल हैं। दर्शन दो, अपनी कृपा दृष्टि की कृपा करके प्रसन्नता प्रदान करो। संगतों की व्याकुलता देखकर गुरु अंगद देव जी एकान्त वास से बाहर आए। सता तथा बलवंड जो संगत के साथ ही खडूर आये थे उन्होंने गुरु नानक जी की बाणी का कीर्तन किया। खडूर में ही रौनकें लगनी प्रारम्भ हो गई। गुरु अंगद देव जी गुरुगद्दी की जिम्मेदारियों को सम्भाल कर गुरु नानक देव जी के मिशन तथा उनके सर्वसांझा उपदेशों के प्रचार-कार्य में लग

सिक्खी प्रचार का नया केन्द्र—खडूर साहिब

गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन के आखिरी साल करतारपुर (अब पाकिस्तान) में रहकर बिताये थे। यहां ही भाई लहिणा जी (गुरु अंगद देव जी) आप की शरण में आए और गुरु गद्दी की सेवा तक पहुंचे थे। परम तत्व में विलीन होने से पहले गुरु नानक देव जी ने गुरु अंगद देव जी को करतारपुर छोड़कर खडूर चले जाने का आदेश दिया था। इस बात का उल्लेख भाई गुरदास जी तथा सता बलवंत ने अपनी वारों में किया है :

दिता छोडि़ करतारपुर, बैठि खडूरे जोति जगाई।।

(वार पहिली, पउड़ी 46वीं)
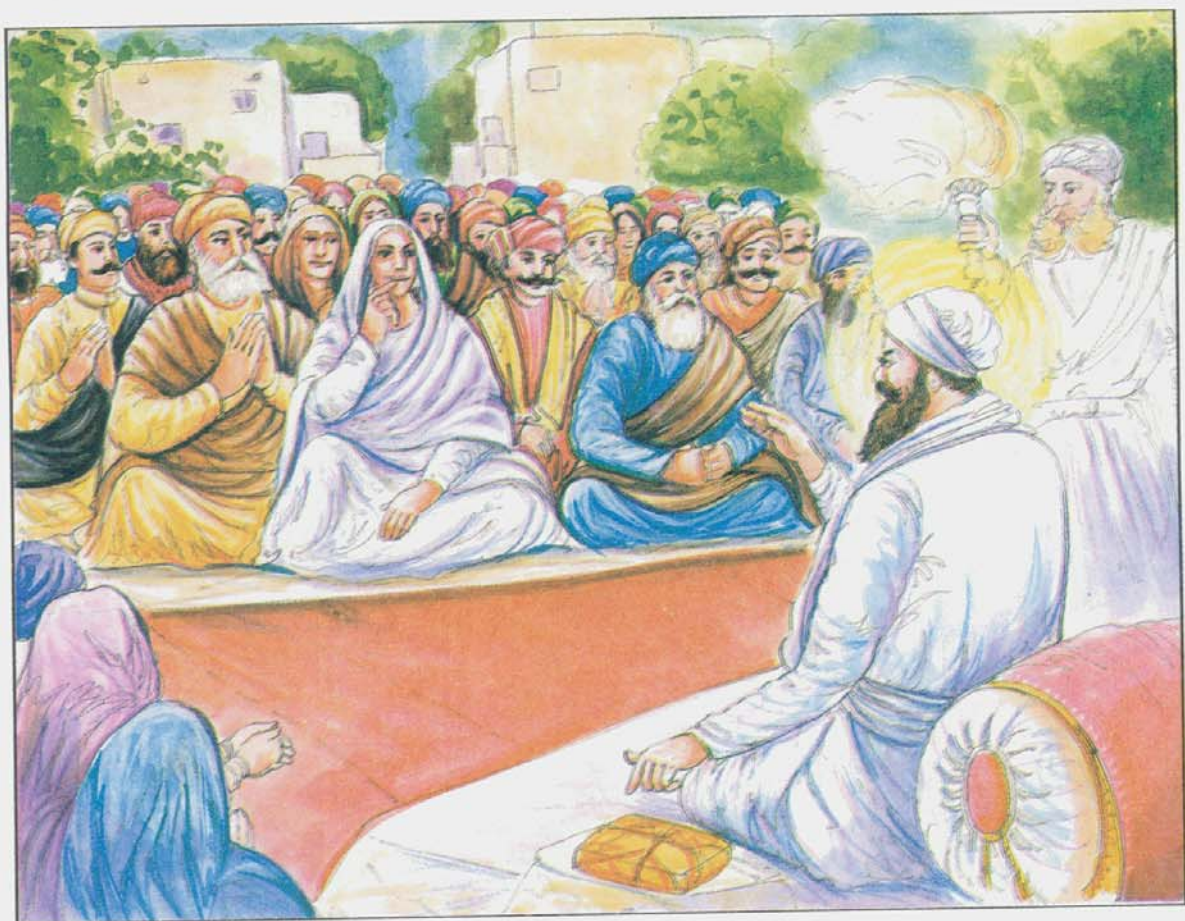
इतिहास में इसका उल्लेख है कि गुरु अंगद देव जी पहर रात रहते उठते थे। स्नान करके सहज समाधि में लीन हो जाते थे। नेत्र खुलने पर आप धर्मशाल की ओर चल पड़ते थे। महिमा प्रकाश में लिखा है कि जिस पर आपकी पहली नज़र पड़ जाती थी वह दुख दर्द के रोग से मुक्त हो जाता था।

धर्मशाल में आकर आप रबाबियों से 'आसा दी वार' का कीर्तन सुनते और संगत को उपदेश देते। दिन चढ़ने तक आई हुई संगत तथा जिज्ञासुओं से ज्ञान चर्चा होती रहती। दोपहर के समय आप लंगर में जाकर पंगत में बैठकर सब के साथ प्रसाद पान करते। गुरु नानक देव जी ने लंगर की प्रथा समाज से जाति-वर्ण तथा ऊंच-नीच के भेद को मिटाने के लिए प्रारम्भ की थी। लंगर में किसी भी व्यक्ति से कोई भेद भाव नहीं किया जाता था। सभी में एक जैसा प्रसाद ही बांटा जाता था। लंगर की देख-भाल माता खीवी जी करते थे। लंगर-पान करने के उपरान्त गुरु जी कुछ समय के लिए विश्राम करते थे। शाम के समय उन बाणियों का पाठ किया जाता था जो गुरु नानक देव जी निर्धारित कर गये थे। गुरु घर के कीर्तन करने वाले गुरबाणी के शब्दों का गायन करते। रात प्रसाद-पान करने के उपरान्त आप विश्राम करने के लिए चले जाते। आप समय की बहुत कद्र करते थे तथा दिन का कोई पल भी व्यर्थ नहीं गँवाते थे।

माता खीवी जी

गुरु ग्रंथ साहिब में एक मात्र सिक्ख बीबी के नाम का उल्लेख हुआ है और वे हैं माता खीवी जी। गुरु घर के रबाबी सता तथा बलवंड ने वार रामकली में आप जी के शीतल तथा मधुर स्वभाव की बहुत प्रशंसा की है। आप गुरु अंगद देव जी की पत्नी थीं। आप जी के पिता भाई देवी चंद जी गांव संघर (खडूर के पास) के रहने वाले थे। गुरु अंगद देव जी के साथ माता खीवी का विवाह सन् 1519 को हुआ था। उस समय देश में लोधी सुल्तानों का राज्य था और देश पर सिकन्दर लोधी राज्य कर रहा था।

जब गुरु अंगद देव जी ने गुरुगद्दी का उत्तरदायित्व सम्भाल कर गुरसिक्खी का प्रचार करना प्रारम्भ किया तब माता खीवी ने बड़ी विनम्रता से पूछा–'मेरे लिए क्या आदेश है?' भाई वीर सिंह अष्ट गुरु चमत्कार में लिखते हैं कि गुरु अंगद देव जी ने फरमाया था कि–'मेरे दाता ने मुझे शब्द दान देने का कड़छा दिया है
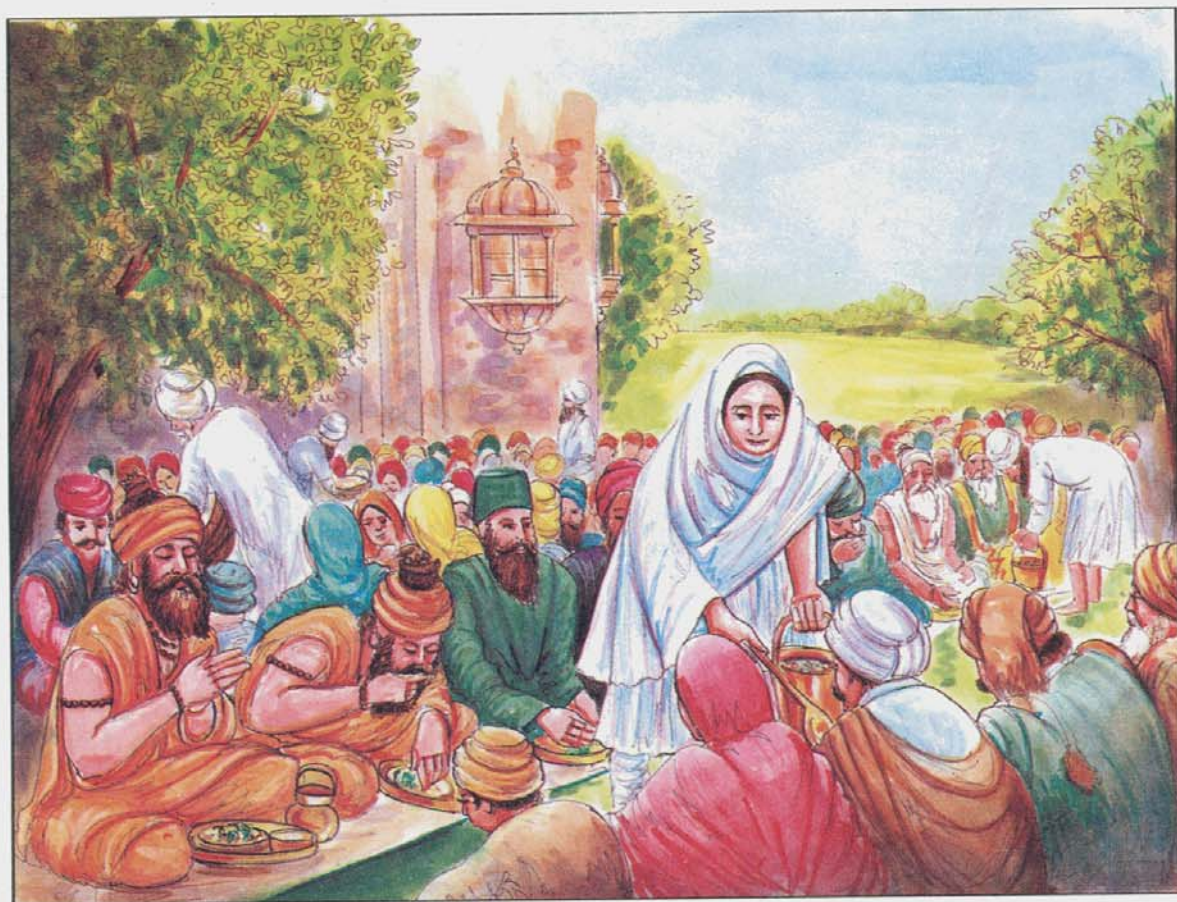
आप अन्नदान देने के कड़छे का प्रयोग करो।' गुरु जी का आदेश पाकर माता खीवी जी ने खडूर आने वाली संगत को ठहराने तथा लंगर की सेवा को सम्भाल लिया। संगत को नाम की दात गुरु अंगद देव जी के दरबार से मिलती थी तो अन्न-पानी और भोजन माता खीवी द्वारा चलाये जा रहे लंगर से।

माता खीवी जी खडूर आने वाली संगत के सुख-आराम का बहुत ध्यान रखती थीं। गुरु घर में चलाए जा रहे लंगर में अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त घी वाली खीर भी मिलती थी।

माता खीवी जी बड़े मीठे और शीतल स्वभाव वाली स्त्री थीं। आप दिन रात संगत की सेवा में लगी रहती थीं। आप जी के दो सुपुत्र दातू जी तथा दासू जी थे तथा दो सुपुत्रियां अमरो जी तथा बीबी अनोखी जी थीं। माता खीवी जी की दोनों बेटियों ने अपनी माता तथा अपने पिता गुरु अंगद देव जी से बहुत सुन्दर गुण ग्रहण किये थे। माता खीवी जी अपने बेटों को भी सदा गुरु पिता की आज्ञा में चलने का उपदेश दिया करती थीं। उन दिनों में भारतीय समाज में पर्दा प्रथा का बहुत प्रचलन था। औरतें घर से बाहर निकलते समय घूंघट निकाल लिया करती थीं। माता खीवी गुरु घर की पहली स्त्री थी जिसने पर्दा प्रथा को त्याग कर खुले मुंह विचरण कर स्त्रियों की दशा को सुधारने के लिए कदम उठाया था।

गुरु अंगद पातशाह के साथ मिलकर आप जी ने भी सिक्ख धर्म के प्रचार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। आप एक आदर्श पत्नी तथा कुशल गृहणी थीं। आप जी का समूचा जीवन तप, त्याग, प्रभु भक्ति तथा मानवता की सेवा का बहता हुआ चश्मा था।

गुरबाणी की सुरक्षा तथा बाणी की रचना

गुरगद्दी का उत्तरदायित्व सम्भालने के उपरान्त गुरु अंगद देव जी का पहला महत्त्वपूर्ण कार्य गुरु नानक देव जी की बाणी को सुरक्षित रखना तथा उसे लोगों तक पहुंचाना था। पुरातन जन्म साखी के अनुसार परम तत्व में विलीन होने से पूर्व गुरु नानक देव जी ने गुरु अंगद देव जी को एक पोथी दी थी, जिसमें उनके द्वारा रचित बाणी थी। जन्म-साखी में लिखा है 'तित महिल जो शबद होइआ, सो पोथी गुरु अंगद जोग मिली'। पर अभी भी कुछ बाणी जगह-जगह सिक्खों के पास सुरक्षित पड़ी थी। गुरु अंगद देव जी ने दूर-दूर रह रहे सिक्खों को सन्देश भेजे कि जिनके पास भी गुरु बाबा की बाणी या जीवन वृत्तान्त सुरक्षित पड़े हों वे खडूर लेकर आयें जिससे उन्हें एक स्थान पर सुरक्षित रखा जा सके। अष्ट गुरु चमत्कार में भाई वीर सिंह जी लिखते हैं कि इस महान कार्य में हस्सू लुहार,
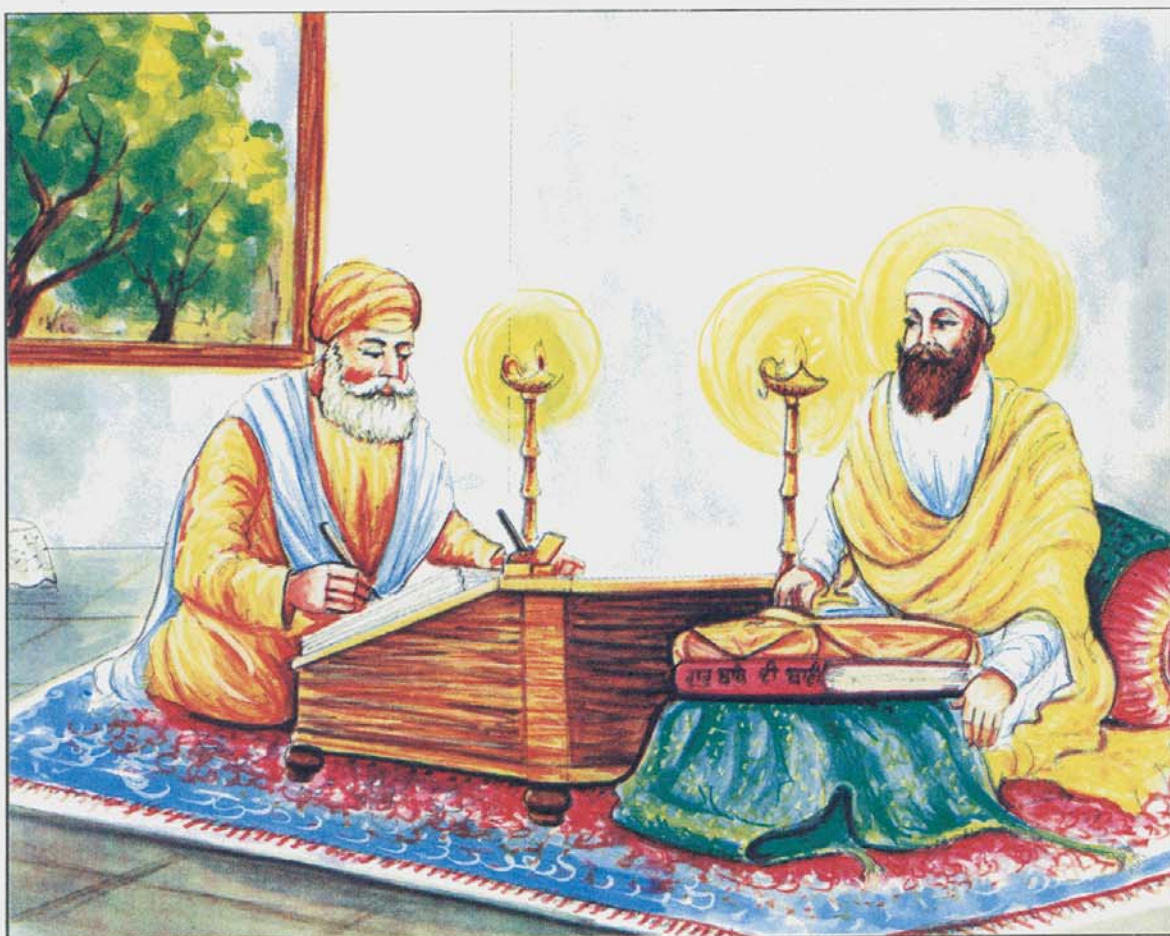
शीहां छीबा, ब्रह्मदास (कश्मीर), सैदे घेहो, झाडू कलाल तथा अजिते रंधावा ने बहुत सहायता की और गुरु नानक देव जी की सारी बाणी एक स्थान पर इकट्ठा हो गई। कुछ बाणी शारदा अक्षरों में तथा कुछ टाकरा अक्षरों में लिखी हुई थी। आप जी ने सारी बाणी को गुरमुखी लिपि में लिखवा कर गुरु ग्रंथ साहिब के सम्पादन (1604 ई.) के लिए एक ठोस आधार कायम कर दिया।

गुरु नानक देव जी की बाणी के अनुरूप गुरु अंगद देव जी ने भी बाणी की रचना की है। यह मात्रा में बहुत कम है। केवल 63 श्लोक हैं जो गुरु नानक, गुरु अमरदास तथा गुरु रामदास जी द्वारा रचित वारों की कुछ पउड़ियों के साथ संकलित हैं।

इस बाणी में उन्होंने अटल सच्चाइयों का ही वर्णन किया है जिनका गुरु नानक देव जी आजीवन प्रचार करते रहे तथा लोगों के मनों तक पहुंचाते रहे थे। गुरु अंगद देव जी की बाणी बहुत सरल भाषा में है जो पढ़ते ही हमारे मन में फूलों की महक की तरह समा जाती है। आपकी बाणी में प्रभु भक्ति, गुरु की सेवा तथा सफल जीवन जीने की प्रेरणा दी गई है। आप का अपना जीवन भी सेवा, सिमरन, श्रृद्धा तथा भक्ति वाला जीवन था, जिससे प्रेरित होकर बाबा अमरदास जी आपकी शरण में आए थे। आपकी सम्पूर्ण बाणी पर गुरु नानक देव जी की बाणी का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। आपका फरमान है कि सच्चे गुरु की प्राप्ति के बिना मन का अंधकार दूर नहीं होता :

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार
ऐते चानण होंदिआं गुर बिन घोर अंधार।
(श्लोक महला 2, गुरु ग्रंथ जी, अंक 462)

गुरु बाबा की जन्म साखी लिखवाई

गुरगद्दी की जिम्मेदारी सम्भालने के उपरान्त गुरु अंगद देव जी ने सिक्खी के प्रचार तथा प्रसार के लिए कई कार्य आरम्भ किए। इसका उद्देश्य गुरु नानक देव जी की बाणी तथा विचारधारा को लोगों तक पहुंचाना था। गुरबाणी की सुरक्षा, गुरमुखी लिपि का प्रचार, संगत, पंगत तथा कीर्तन की मर्यादा को दृढ़ करना था। इसके साथ ही साथ उन्होंने गुरु नानक देव जी के जीवन के विवरणों को एकत्रित करके उनको लिखवाने का काम प्रारम्भ किया जिसको अब हम जन्मसाखी के नाम से जानते हैं। इस जन्म साखी में गुरु नानक देव जी के जीवन, उनकी उदासियों तथा उन स्थानों का विवरण है जहां आप गये तथा लोगों को
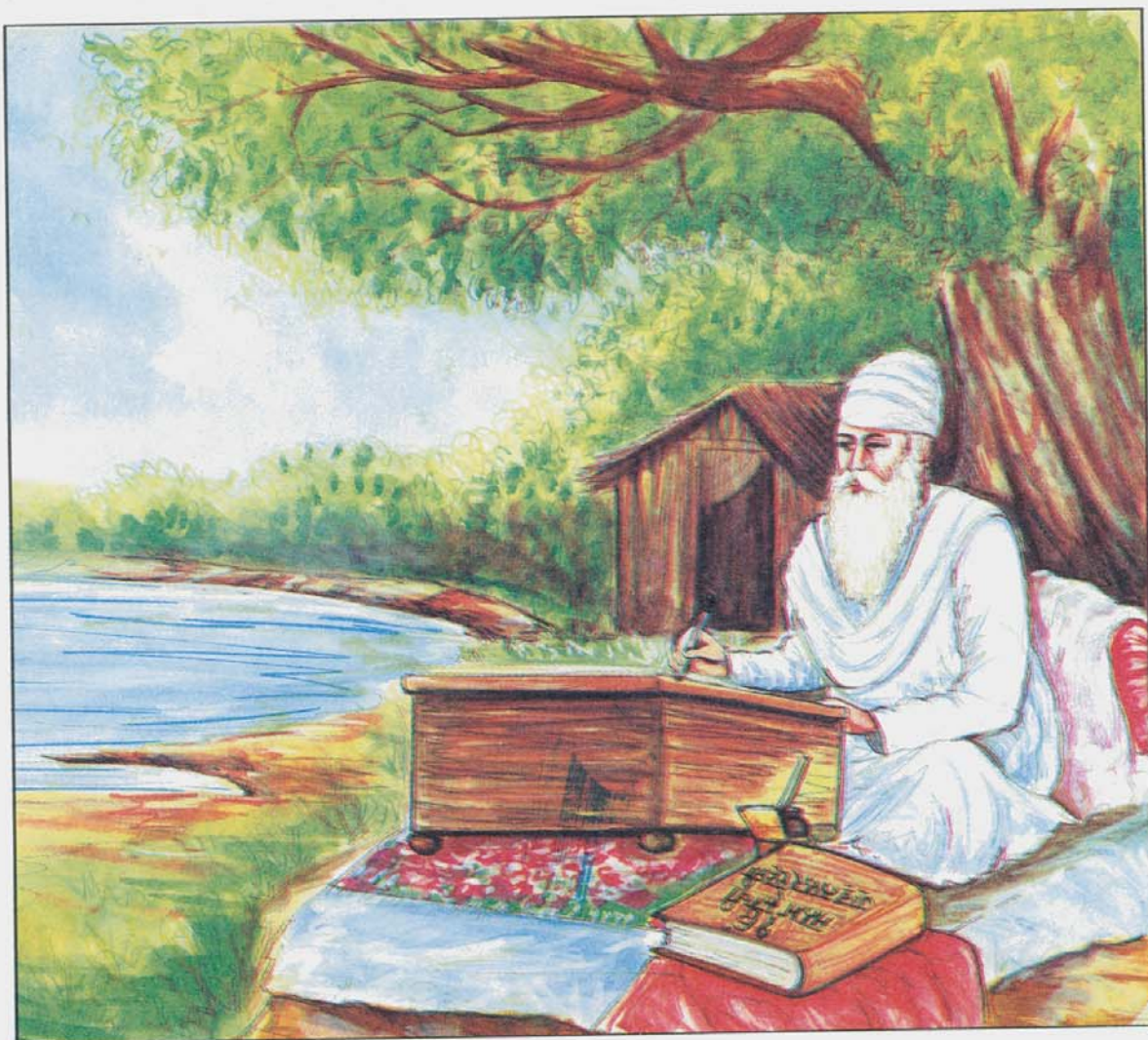
उनकी उदासियों तथा उन स्थानों का विवरण है जहां आप गये तथा लोगों को सच्चे नाम के साथ जोड़ा। गुरु अंगद देव जी ने यह जन्म साखी भाई बाले से लिखवाई थी इस लिए इसको भाई बाले वाली जन्म साखी भी कहा जाता है। अष्ट गुरु चमत्कार में भाई वीर सिंह जी लिखते हैं कि आपने गुरु नानक देव जी की बाल लीला के विवरण तलवंडी से इकट्ठे किये थे। कुछ विवरण उनको गुरु नानक देव जी के चाचा भाई लालो जी से प्राप्त हुए थे। बचपन की बहुत-सी लीलाएं (घटनाएँ) और कौतुक भाई बाला ने अपनी आंखों से देखे थे। उन्हें भी कलमबद्ध कर लिया गया। गुरु नानक देव जी की दूसरी उदासी के समय भाई सैदो गुरु जी के साथ थे। उस उदासी का सारा विवरण उनसे लिखवा लिया गया। कई बार जब वे सिक्ख खडूर साहिब आते जिन्होंने गुरु नानक देव जी के दर्शन किये थे या वे किसी घटना के सम्बंध में जानते थे तो गुरु अंगद देव जी वह भी लिखवा कर जन्म साखी में संकलित कर लिया करते थे। इसी कारण यह जन्मसाखी संवत् या सालों के क्रम से नहीं है, बल्कि हर साखी के अन्त में लिखा हुआ है 'साखी और चली।'

सिक्ख इतिहास लिखवाने के प्रति गुरु अंगद देव जी का यह पहला बहुत बड़ा कदम था। यदि हम इस जन्मसाखी को पहली इतिहास पुस्तक कहें तो गलत नहीं होगा। पर भाई बाले वाली जन्मसाखी के प्रति विद्वानों की राय अलग अलग

बच्चों से प्रेम

गुरु अंगद देव जी बच्चों से बहुत प्यार करते थे। दोपहर को विश्राम करने के उपरान्त आप दिन के तीसरे पहर में खेतों की ओर चले जाते थे। वहां गांव के छोटे बच्चों को इकट्ठा करके आप उनके खेलों को देखते तथा प्रथम आने वाले बच्चों को पुरस्कृत करते।
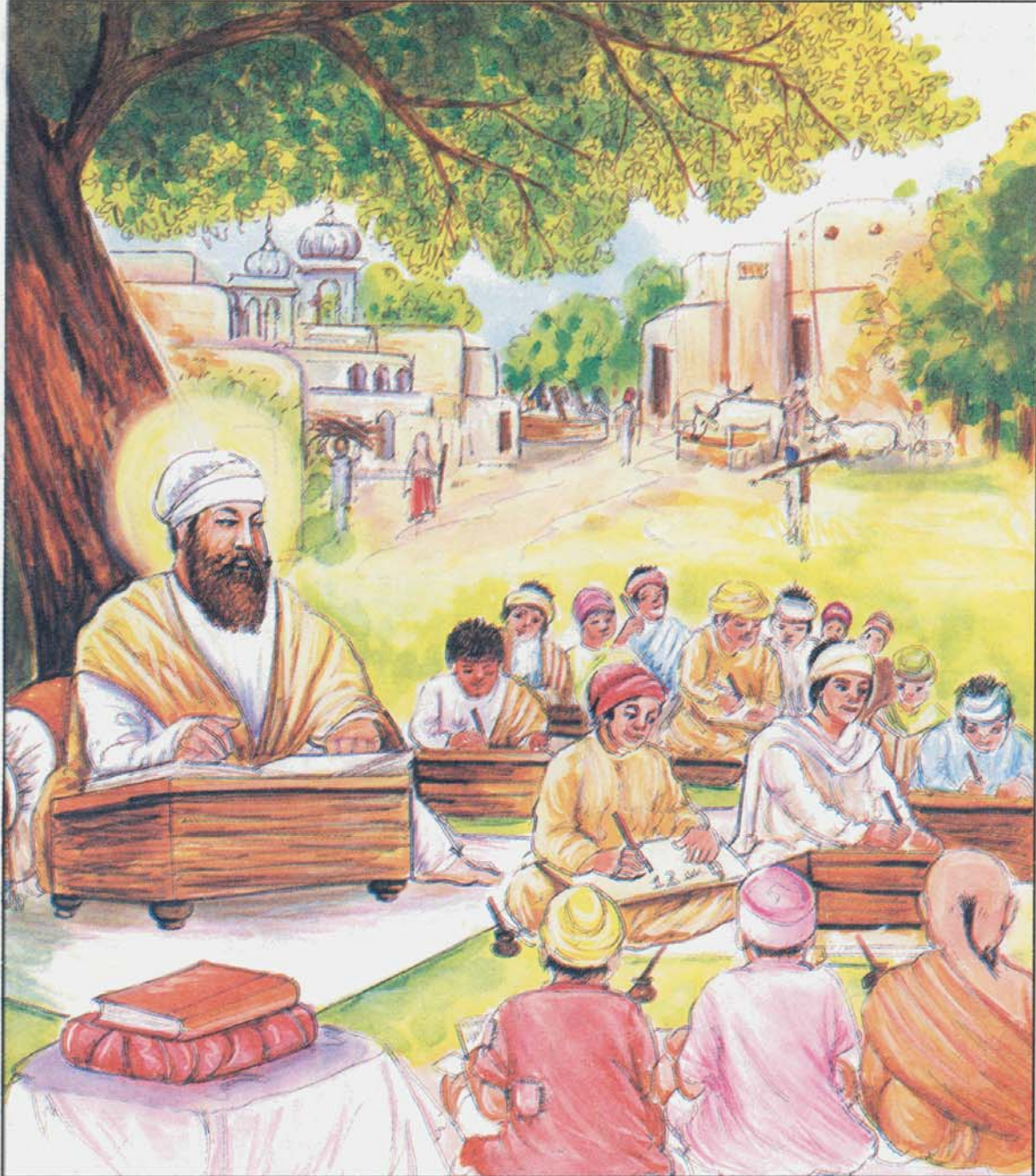
आपने बच्चों को शिक्षा देने के लिए खडूर साहिब में पहली पाठशाला स्थापित की। यहां बच्चे। को गुरमुखी लिपि के अक्षर सिखाये जाते थे। पंजाबी की वर्णमाला बेशक पहले से ही किसी-न-किसी रूप में प्रचलित थी पर आपने उसमें सुधार करके गुरमुखी लिपि को वह रूप प्रदान किया जिसका आज हम प्रयोग करते हैं।

गुरु अंगद देव जी ने बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा के लिए बाल बोध (कायदा) तैयार किये तथा शुद्ध पंजाबी लिखने के लिए पंजाबी का पहला व्याकरण (ग्रामर) तैयार करवाया। आप के परिश्रम तथा लगन के कारण पंजाबी में अच्छे साहित्य की रचना का मार्ग खुल गया। पंजाब की संस्कृति को यह आपकी बहुमूल्य देन है।

गुरु अंगद देव जी समझते थे कि अच्छे समाज तथा देश का भविष्य बच्चों पर निर्भर करता है। इसी कारण आप अपनी आध्यात्मिक जिम्मेदारियों के साथ-साथ बच्चों की पढ़ाई, बच्चों की खेलों तथा बच्चों के विकास की ओर विशेष रूप से ध्यान देते थे। आपका शिक्षा देने का ढंग बहुत सरल तथा निराला था। आप वर्णमाला के आधार पर कोई न कोई प्रसंग या गुर (मुहावरा) लिख कर बच्चों को नैतिक शिक्षा भी देते थे, जिससे कि वे अच्छे नागरिक बन सकें।

गुरु अंगद देव जी द्वारा बच्चों के प्रति दिखाई गई रुचि के संबंध में अंग्रेज भाषा वैज्ञानिक तथा विद्वान प्रोफैसर हक्सले ने बहुत प्रशंसा की है।

जहां गुरु अंगद देव जी बच्चों की क्रीड़ाएँ करवाते तथा पंजाबी भाषा की शिक्षा दिया करते थे वहां अब गुरुद्वारा मल्ल अखाड़ा स्थापित है।

हुमायुं का खडूर आना

जब सितम्बर 1539 में भाई लहिणा जी गुरु अंगद देव के रूप में गुरगद्दी पर विराजमान हुए उस समय देश पर मुगल बादशाह हुमायुं का राज्य था। वह एक अयोग्य तथा असफल शासक था। जब वह 1540 में शेरशाह सूरी से पराजित होकर पंजाब की ओर भागा तो कुछ समय के लिए खडूर भी आया। वह पुनः देश
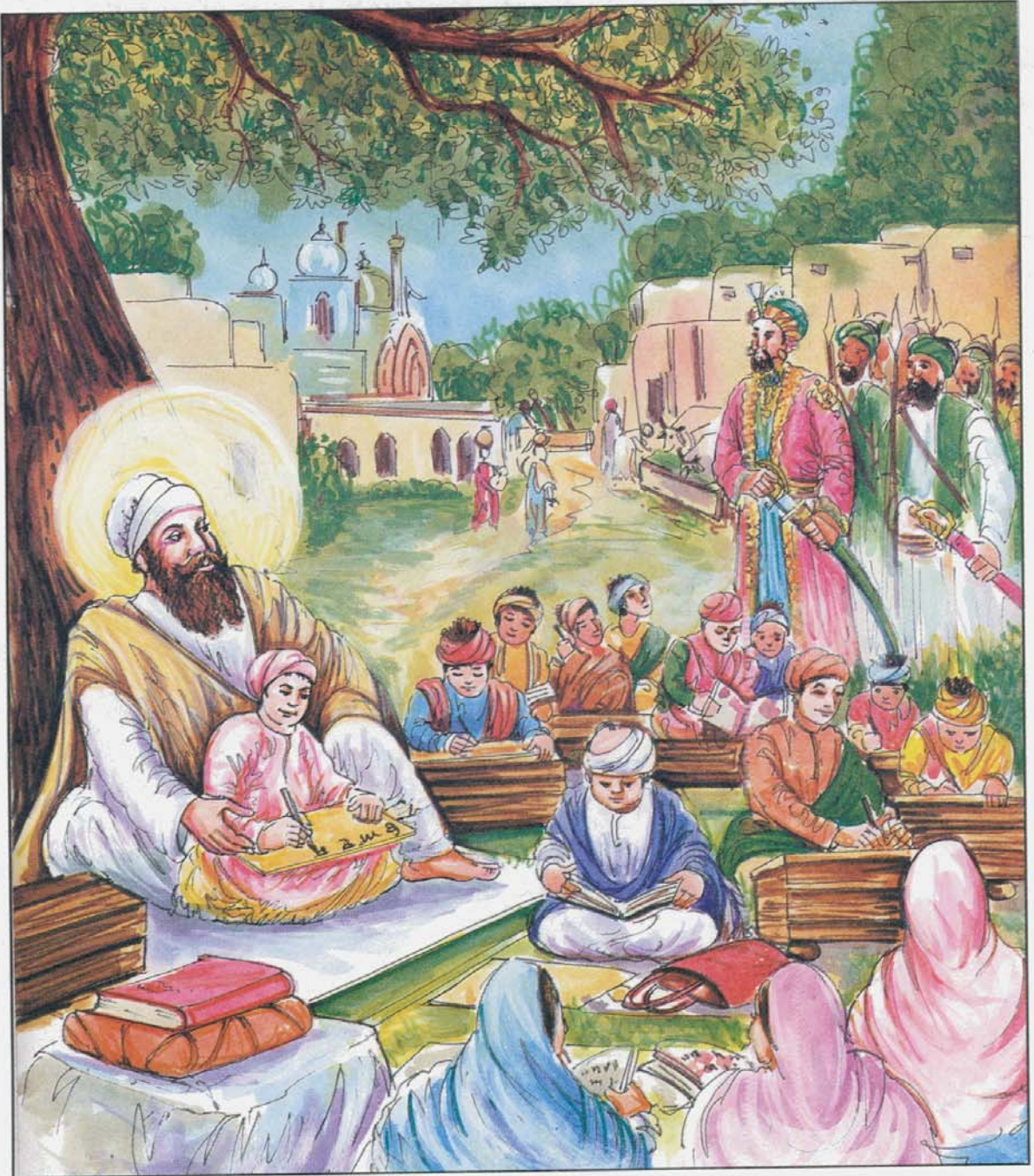
पर राज्य प्राप्त करने के लिए गुरु अंगद देव जी का आशीर्वाद चाहता था। जब हुमायुं खडूर पहुंचा उस समय गुरु जी बच्चों को पढ़ाने में व्यस्त थे। उनका पास खड़े हुमायुं की तरफ ध्यान नहीं गया। हुमायुं ने क्रोध में लाल-पीला होकर म्यान से तलवार निकाल ली जैसे कि वह गुरु जी का तुरन्त कत्ल कर देना चाहता हो। जब गुरु जी की नज़र हुमायुं पर पड़ी तो गुरु जी मुस्करा पड़े तथा बड़ी शांति से बादशाह हुमायुं को कहने लगे-'जहां यह तलवार निकलनी चाहिए थी (अर्थात शेरशाह सूरी के विरुद्ध) वहां तो यह म्यान में बंद रही (अर्थात तू उससे पराजित होकर) और तुम पंजाब की ओर भाग आए और अब फकीरों के सामने अपनी तलवार निकालकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहते हो।' गुरु जी के वचन सुनकर हुमायुं लज्जित हुआ। उसने गुरु अंगद देव जी से माफी मांगी और गुरु जी का आशीर्वाद लेकर अफगानिस्तान की ओर चला गया।

मल्लू शाह

मल्लू शाह बड़ा बहादुर योद्धा था। वह मुगलों की नौकरी करता था। उसके मन में शंका पैदा हो गई कि वह सैना (फौज) की नौकरी करता है जहां मरना या मारना ही उनका काम है। यह काम करते हुए उनका पार-उतारा (मुक्ति) कैसे होगी? वह गुरु अंगद देव जी महाराज के पास आया और अपने मन के संशय को प्रकट करके पूछने लगा कि मेरे मन को कैसे शांति मिलेगी? गुरु जी ने मल्लू शाह की बात को सुना और उसको समझाया कि हिंसा वह होती है जो जान-बूझ कर की जाए। लड़ना-मरना या मारना तो वीर का धर्म है। सच्चा योद्धा वही है जो पहले खुद किसी पर बल प्रयोग या अत्याचार नहीं करता। पर यदि युद्ध आवश्यक हो जाए तो अधिक या कम की चिंता किए बिना वह युद्ध करते हुए वीर गति को प्राप्त करे।

भाई मल्लू शाह के सम्बन्ध में भाई वीर सिंह अष्ट गुरु चमत्कार में लिखते हैं-'जोगी जीवन वीर रसी जीवन है। यह ज़ोर जुल्म करने वालों को ज़ोर जुल्म रोकने के लिए बनाया गया है। यह खुद ज़ोर जुल्म करने के लिए नहीं है। यह एक महान दान है, जिसमें शरीर का भी दान हो जाता है। इसके मूल में है उत्साह और उत्साह परोपकार करने का, बुराई को रोकने का तथा नेकी का प्रचार करने का मार्ग है। इसलिए शूरवीर अपने वीर रसपूर्ण धर्म में कभी कायरता न दिखाए। वीर रसपूर्ण उपकारी योद्धा के समक्ष आई मृत्यु सफल होती है।'

गुरु जी का उपदेश सुनकर मल्लूशाह का मन शांत हो गया। उसके मन के सभी संशय दूर हो गए। वह अपने सैनिक जीवन के साथ-साथ परमात्मा का नाम जपने, गरीब, दलित की सेवा करने तथा दान देने में लग गया।

कर्म कोई भी बुरा नहीं

सिक्ख धर्म के तीन प्रमुख सिद्धांत हैं–नाम जपना, कर्म करना तथा बांट कर खाना। अपने हाथ से कर्म करके कमाये हुए धन से दान देना श्रेष्ठ माना जाता है। गुरु नानक पातशाह का कहना है:

घाल खाइ किछु हथहु देइ नानक राहु पछाणहि सेइ।

अपनी चार उदासियों के उपरान्त जब गुरु नानक देव जी करतार पुर में आकर रहने लगे तो वे खुद अपने हाथों से खेती करते थे। जब बहिन नानकी के पास सुल्तानपुर के लोधी ठहरे हुए थे तो वे वहां मोदी का काम करते रहे थे। गुरु घर में किसी भी कर्म (व्यवसाय) को बुरा नहीं समझा गया है।

गुरु पदवी ग्रहण करने से पूर्व भाई लहिणा जी (अर्थात गुरु अंगद देव जी) दुकानदारी किया करते थे। खडूर आकर निवास करने के उपरान्त वे गुरु पदवी की जिम्मेदारियां निभा रहे थे वहीं अपनी आजीविका के लिए मूंज की रस्सियां बना कर कुछ धन कमा लेते थे। घर–गृहस्थी की आवश्यकताएँ पूरी हो जाने के उपरान्त जो धन उनके पास बचता वह गुरु के लंगर के लिए दे देते थे। आपने कभी भी संगत के धन को अपने घर–परिवार के लिए खर्च नही किया। आप अपने दोनों बेटों दातू तथा दासू को भी यही शिक्षा दिया करते थे कि इन्सान को कोई भी काम करने में शर्म महसूस नहीं करनी चाहिए। भाई वीर सिंह ने अष्ट गुरु चमत्कार में गुरु अंगद देव जी के अनेक सिक्खों की साखियों का वर्णन किया है जो गुरु अंगद देव जी की शरण में आकर, उनके उपदेश सुनकर जीवन–मुक्त हो गए।

परमात्मा की इच्छा में रहना

गुरु अंगद देव जी का उपदेश सुनने के लिए संगत दूर-दूर से खडूर साहिब आया करती थी। इनमें जीवा नाम का एक सिक्ख भी था। वह गांव नोरंगाबाद का रहने वाला था। यह गांव खडूर साहिब से लगभग पांच मील की दूरी पर है। भाई जीवा प्रतिदिन गुरु के लंगर के लिए खिचड़ी तैयार करके लाया करता था। एक दिन बहुत जोर की आंधी आई। हर तरफ मिट्टी का गुब्बार छा गया। चूल्हे में आग जलानी भी कठिन हो गई। आंधी के कारण भाई जीवा परेशान था। यदि आंधी नहीं रुकी तो गुरु के लंगर के लिए खिचड़ी कैसे तैयार होगी। वह गुरु अंगद देव जी के दरबार में आया और हाथ जोड़ कर विनती करने लगा–'महाराज, आप सर्वशक्तिमान है। यदि यह आंधी रोक दो तो मैं लंगर के लिए खिचड़ी तैयार कर लूं।' गुरु महाराज ने भाई जीवा की ओर देखा और कहने लगे–'भाई जीवा, खिचड़ी दो घड़ी ठहर कर भी तैयार हो सकती है, पर परमात्मा के नियमों में दख्ल देना किसी को शोभा नहीं देता। जिस तरह स्त्री पति के हुकुम में चलकर उसकी खुशी प्राप्त करती है वैसे ही गुरु का सिक्ख परमात्मा की इच्छा में चलकर ही मालिक (प्रभु) की कृपा का पात्र बनता है।' गुरु जी ने भाई जीवा को यह भी समझाया कि इस आंधी से कइयों को आजीविका मिलती है। हवा की शक्ति से समुद्र में जहाज चलते हैं। कई स्थानों से अन्न के दाने उड़कर ऐसे स्थान पर जाकर गिरते हैं जहां कई जीवों का पेट भरता है। इसलिए परमात्मा की रजा (हुकुम) में राजी रहना ही सिक्खी धर्म है। भाई जीवा ने गुरु जी की आज्ञा मानकर उनके आगे सिर झुका दिया।

हुकमि मंनिऐ होवै परवाणु ता खसमै का महलु पाइसी।।

(वार आसा, महला 1, गुरु ग्रंथ जी, अंक 471)

मलूका शराबी

खडूर में एक चौधरी रहता था। उसका नाम जवाहर मल था, पर नगर के लोग उसको मलूका चौधरी के नाम से जानते थे। उसे गुरु अंगद देव जी की प्रशंसा अच्छी नहीं लगती थी। वह कई बार गुरु घर के प्रति अपशब्द बोलता रहता था। उसे शराब पीने की बुरी आदत थी। कई बार अधिक शराब पीने के कारण वह
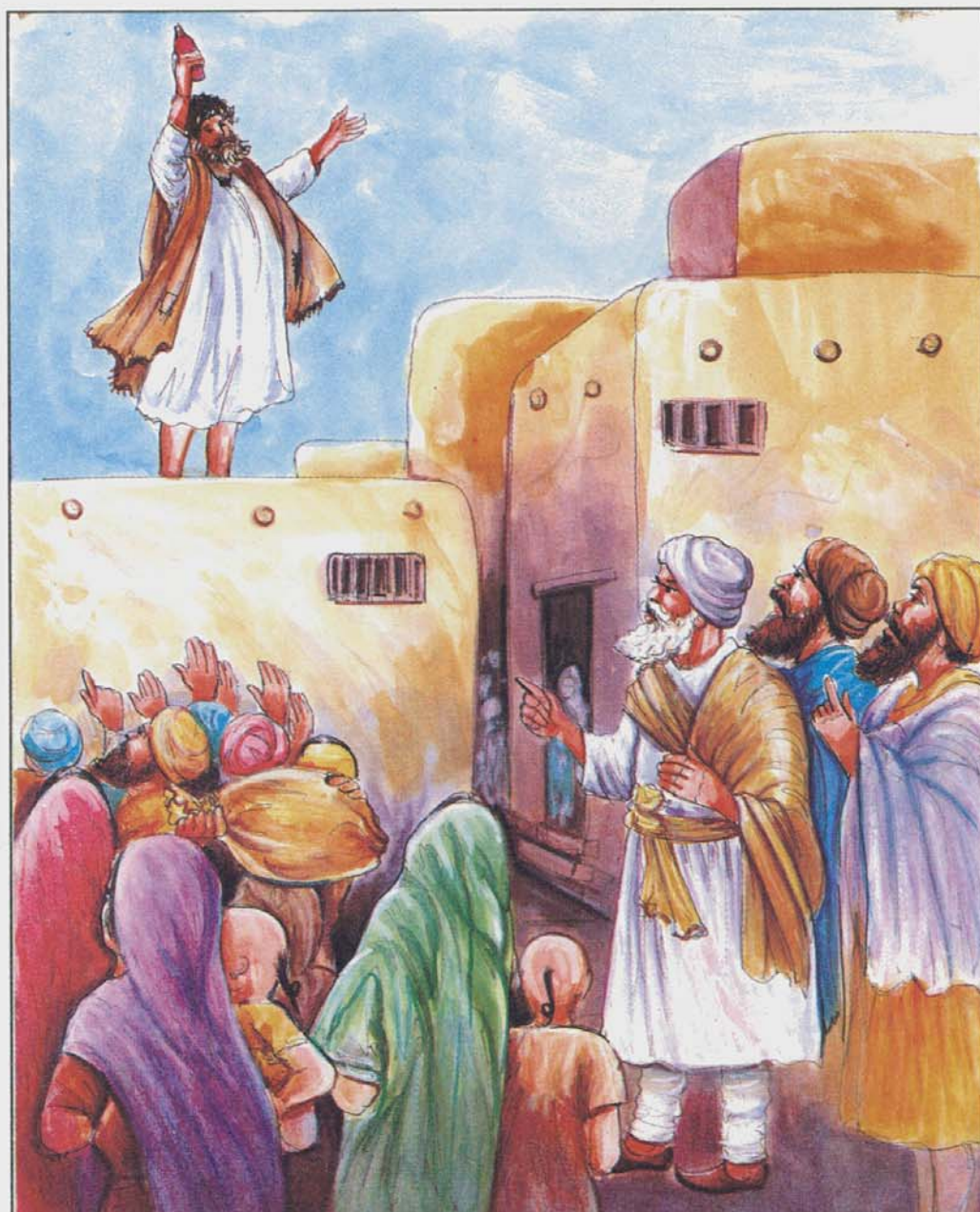
बेहोश होकर गली में गिर पड़ता था। शराब की बुरी आदत के कारण उसको मिर्गी का रोग हो गया था। वह इस रोग से बहुत परेशान था। नगर के समझदार लोगों ने उसे गुरु अंगद देव जी के पास जाकर अपनी गलती के लिए माफी मांगने की सलाह दी। मिर्गी के रोग से दुखी मलूका एक दिन गुरु दरबार में चला गया। गुरु सदा क्षमावान है। वह किसी की बुराई को मन में धारण नहीं करता, बल्कि सीधे मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। गुरु जी मलूका के संबंध में सब कुछ जानते थे। गुरु जी ने उसको कहा कि नाम जपा कर। अच्छे काम किया कर। और यदि तुम शराब पीने की आदत को त्याग दो तो तुम्हारा मिर्गी का रोग सदा के लिए दूर हो जायेगा। मलूका गुरु जी को प्रण देकर आ गया कि अब वह कभी भी शराब का सेवन नहीं करेगा। गुरु जी की कृपा से मलूका की बीमारी जाती रही। गुरु घर के विरोधियों तथा मलूका को उकसाने वाले मित्रों ने मलूका को भड़काया और कहा कि तुम्हारे रोग के दूर होने में गुरु घर का बड़प्पन नहीं और न ही तुम्हारी बीमारी का सम्बन्ध शराब के साथ है। तुम गुरु जी का अपने ऊपर इतना अहसान क्यों मानते हो? मलूका के मन पर अपने मित्रों की बुरी सलाह का असर हो गया और उसने फिर से शराब पीनी प्रारम्भ कर दी। एक दिन बरसात हो रही थी। मौसम भी ठंडा और सुहावना था। मलूका ने बहुत ज्यादा शराब पी ली और मकान की छत पर चढ़ गया। अचानक मिर्गी का ऐसा दौरा पड़ा कि वह बेसुध होकर गली में जा गिरा। गली में गिरते ही मलूका के प्राण निकल गए। यह सच है कि जो गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करता तथा उससे विमुख रहता है उसका यही परिणाम होता है जो मलूका का हुआ।

गुरबाणी हमें हर प्रकार के नशे से दूर रहने की प्रेरणा तथा चेतावनी देती है :

जितु पीतै मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ।
आपणा पराइया न पछाणई खसमहु धके खाइ।
जितु पीतै खसमु विसरै दरगह मिलै सजाइ।
झूठा मदु मूलि न पीचई जे का पारि वसाई।
(वार बिहागड़ा 3, गुरु ग्रंथ जी, अंक 554)

खड़ूर का तपी (तपस्वी)

खडूर में एक तपी (तपस्वी) रहता था जो बहुत अहंकारी तथा ईर्ष्यालु था। जब से गुरु अंगद देव जी ने संगत को सच्चे नाम का उपदेश देना प्रारम्भ किया था तबसे उसके सेवकों की संख्या कम होनी शुरू हो गई थी। दिन प्रति दिन गुरु जी की ख्याति तथा स्तुति को बढ़ता देख वह गुरु घर से ईर्ष्या करने लगा था। हर समय वह गुरु अंगद देव जी के प्रति दुर्वचन ही बोलता रहता था। वह किसी ऐसे अवसर की तलाश में था जिससे वह लोगों को गुरु दरबार में जाने से रोक सके।

एक बार खडूर के आस-पास दूर-दूर तक वर्षा नहीं हुई। किसानों की फसल सूखनी शुरू हो गई। जब भी लोग गुरु महाराज के पास जाते तो गुरु महाराज सदा यही कहते कि वर्षा करना या न करना परमात्मा (वाहिगुरु) के हाथ में है। कोई भी आदमी इसमें कुछ नहीं कर सकता। जब परमात्मा का हुकुम होगा बरसात अवश्य होगी।

बरसात न होने से परेशान होकर कुछ लोग इकट्ठा होकर तपी के पास गए और विनती की—महाराज आप तो साधु है, महापुरुष हैं। कोई ऐसा कौतुक दिखाओ जिससे बरसात हो जाए और हमारी फसल बच जाए। तपी ऐसे ही अवसर की तलाश कर रहा था। वह क्रोध में बोला—'एक गृहस्थ (अर्थात गुरु अंगद देव जी) के अनुयायी बनने का यही तो परिणाम है। जब तक आप उस गृहस्थ गुरु को गांव से बाहर नहीं निकालते तब तक वर्षा नहीं हो सकती।' अब खडूर के लोग जिनकी फसलें सूख रही थीं एक बार फिर मिलकर गुरु अंगद देव महाराज जी के पास गए और कहने लगे कि 'हमें तपी ने कहा है कि यदि आप खडूर छोड़ कर कहीं ओर चले जाओ तो हमारे खेतों में वर्षा हो सकती है।' गुरु जी उनकी अज्ञानता तथा अंधविश्वास को देखकर मुस्कराए और कहने लगे—'यदि हमारे यहां से चले जाने से वर्षा हो सकती है तो हम आज ही यहां से चले जाते हैं।' लोगों के कहने से गुरु जी खडूर छोड़कर सात कोस दूर रज़ादा खां वाले गांव (खान रज़ादा) की चरागाह में चले गए।

गुरु जी को गए कई दिन हो गए। तपस्वी ने कई जंतर-मंतर, टूना-टोटका किया, हवन इत्यादि करवाए पर बरसात नहीं हुई। उन्हीं दिनों में बाबा अमरदास

जी (बाद में गुरु अमरदास जी) गुरु अंगद देव जी के आदेश से गोइंदवाल रह रहे थे। जब वे गोइंदवाल से गुरु महाराज के दर्शन के लिए खडूर आए तो गुरु जी को वहां न देख कर हैरान हुए। गांव के लोगों ने उन्हें बताया कि यहां के कुछ अज्ञानी लोगों ने तपी शिवनाथ के कहने पर गुरु अंगद देव जी को गांव से बाहर निकाल दिया है। यह सुन कर बाबा अमरदास जी को बहुत दुख और अफसोस हुआ। उन्होंने कहा—'आपने बहुत बड़ी भूल की है। जिसके नाम से यह नगर बस रहा है आप लोगों ने उन्हें ही यहां से निकाल दिया है। जाओ, उस सच्चे गुरु से अपनी गलती की माफी मांगो और उन्हें वापस लेकर आओ। पारब्रह्म परमात्मा समक्ष सच्चे दिल से अरदास (प्रार्थना) करो वह वर्षा जरूर करेगा। वर्षा न होने

का कारण तो यह तपी खुद ही है। यह सुनकर गांव के कुछ नवयुवक उस योगी (तपस्वी) के पीछे पड़ गए और उसे धक्के मारकर कहने लगे–'निकल पापी (यहां से बाहर) निकल, तेरे कारण ही गांव में बरसात नहीं हो रही है।' इस तरह धक्के खाकर गिरते-पड़ते उस तपस्वी के प्राण निकल गए। पूरे क्षेत्र में वर्षा हुई।

पर जब गुरु अंगद देव जी को पता चला कि बाबा अमरदास जी ने कुछ ऐसे वचन कह दिए थे कि लोग तपस्वी के पीछे पड़ गए थे और उसे अपने खेतों में खींचना तथा घसीटना शुरू कर दिया था जिससे तपस्वी को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े। गुरु अंगद देव जी को बहुत दुख और अफसोस हुआ। बाबा अमरदास जी बेशक आयु में उनसे काफी बड़े थे फिर भी गुरु अंगद देव जी उन्हें समझाने लगे कि यदि आप में ऋद्धि-सिद्धि की शक्तियां भी आ जाएँ तब भी करामात करके दिखाना ईश्वरीय नियमों के विरुद्ध है। अजर वस्तु का जरन (क्षरण) बहुत कठिन है, पर व्यक्ति अपनी शक्तियों का प्रयोग किसी को हानि पहुंचाने के लिए न करे, बल्कि संयम में रहे। ऋद्धि-सिद्धियों की शक्तियों समक्ष लोग झुक तो जाते हैं तथा आपको बड़प्पन भी मिल जाता है, पर यह बड़प्पन व्यक्ति को नाम तथा परमात्मा से दूर ले जाता है। बाबा अमरदास जी ने अपने कहे शब्दों का पश्चाताप किया तथा शेष जीवन प्रभु के हुकुम में चलने का प्रण कर लिया।

नानक दुनीआ की वडिआईआं अगी सेती जालि।
एनी जलीई नामु विसारिआ इक न चलीआं नालि।

(वार मलार, महला 2, अंक 1290)

मेहनत की कमाई

इतिहास में यह उल्लेख आता है कि बाबा अमरदास जी (गुरु अमरदास जी) ने लगभग 12 साल खडूर में रहकर गुरु अंगद देव जी तथा संगत की सेवा की थी। आप एक पहर रात रहते ही उठ जाते थे और गागर लेकर पानी लेने के लिए ब्यास नदी के किनारे चले जाते थे। वापस आकर नदी के ठंडे तथा निर्मल जल से गुरु अंगद देव जी को स्नान करवाते और फिर उनके गीले वस्त्रों को धोते। दिन निकलते ही संगत में जाकर कीर्तन सुनते तथा संगत को पंखा करने की सेवा भी करते। रात के दीवान की समाप्ति के उपरान्त गुरु अंगद देव जी के चरण दबाते और जब तक वे सो न जाते वे सेवा में लगे रहते। कई बार बासरका से उनके परिवार वाले उन्हें वापस ले जाने के लिए आए पर आप सदा यह ही कह देते कि 'मुझे जिस टिकाने की आवश्यकता थी वह टिकाना (आश्रय) मुझे मिल गया है।' बेशक आप की आयु बड़ी थी पर उनमें नौजवानों से भी अधिक उत्साह था। आपकी गहरी श्रद्धा, गुरु की सेवा तथा प्रभु भक्ति देखकर संगत हैरान थी। निरन्तर सेवा में लगे रहना आप का नित्य कर्म बन गया था।

गोइंदवाल बसाना

गुरु अंगद देव जी को गुरगद्दी पर विराजमान हुए सात साल हो गये थे। हजारों लोग हर रोज अपनी इच्छाएँ (मुरादें) लेकर गुरु महाराज के पास आते थे और अपनी झोलियां भर कर जाते थे। सन् 1546 में मरवाह खत्री गोंदा गुरु जी के दरबार में उपस्थित हुआ और कहने लगा–'महाराज ब्यास नदी के किनारे मेरे बुजुर्गों की बहुत-सी जमीन खाली पड़ी है। मैं वहां एक नगर बसाना चाहता हूं पर हमारी बिरादरी के लोग हम से ईर्ष्या करते हैं वहां नगर नहीं बसाने देते। यह भी सुना है कि उस स्थान पर भूतों-प्रेतों का वास है। हम दिन में भवन निर्माण करते हैं वे रात में उसे गिराकर स्थान को उजाड़ देते हैं। आप कृपा करें तो वहां नगर बस सकता है।

सबसे पहले तो गुरु जी ने गोंदे को यह समझाया कि भूतों-प्रेतों का अस्तित्व निर्बल मन की उपज है। हम ऐसी किसी बात में विश्वास नहीं करते। पर हम आपकी विनती मानकर आपके साथ बाबा अमरदास जी को भेजते हैं। उनके जाने से आपका नगर बस जायेगा।

चलते समय गुरु अंगद देव जी ने अपनी कृपा (खुशहाली) वाली छड़ी बाबा अमरदास जी को देते हुए कहा कि जहां-जहां तक आप इस छड़ी से सीमाएँ निर्धारित कर देंगे वहां तक गोंदे का नगर आबाद हो जाएगा।

बाबा अमरदास जी के साथ बहुत-सी सिख संगत भी चल पड़ी जिससे नगर के निर्माण में वे भी योगदान दे सकें। मरवाह खत्री ने बहुत राज मिस्त्री तथा बेलदार भी बुला लिये। मकान बनाने के लिए ईंटें, पत्थर, चूना, मिट्टी, गारा तथा लकड़ी का भी प्रबंध कर लिया गया। कुछ महीनों में ही ब्यास नदी के तट पर गोंदे खत्री के नाम से गोइंदवाल आबाद हो गया। गोंदा खत्री ने गुरु महाराज के लिए सुन्दर चौबारे भी बनवा दिये। गुरु अंगद देव जी ने अपने सिक्खों को नये नगर में बसने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बाबा अमरदास को भी आदेश दिया कि वे बासरका से अपने परिवार को यहीं ले आएँ। जब बाबा अमरदास जी गुरु रूप होकर गुरगद्दी पर विराजमान हुए तब गोइंदवाल सिक्खी प्रचार का महान केन्द्र बन गया।

निराश्रितों का स्थान

एक दिन बहुत वर्षा हो रही थी। चारों तरफ काले और सघन बादल छाये हुए थे। हवा भी बहुत तेज़ चल रही थी। जब आकाश में बादल गरजते तो लगता जैसे तूफान आयेगा। बाबा अमरदास जी अपने नित्य नियम के अनुसार ब्यास से पानी की गागर भरकर लौट रहे थे। रात के अन्धेरे में कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। बाबा अमरदास जी का पैर जुलाहों की खड्डी में अड़ गया और वे गिर गये। पर उन्होंने पानी की गागर नहीं गिरने दी। उनके अचानक गिरने से जोर की आवाज़ हुई। अन्दर से जुलाहे ने पूछा–'कौन है?' इससे पहले कि बाबा अमरदास जी

कुछ बोलते जुलाहे की पत्नी ने अपने पति से कहा–'और कोन होगा इस समय। निराश्रित अमरू ही होगा।' जब अमरदास जी के कानों में यह आवाज पड़ी तो सहज भाव से ही उनके मुंह से यह वचन निकला–'कमली (पगली, बावली) है। यह नहीं जानती कि मैं गुरु वाला हूं। निराश्रित नहीं। गुरु का घर ही मेरा घर है।' वे यह वचन कहकर और गागर उठा कर गुरु जी के निवास स्थान पर आ गए। अमरदास जी के मुंह से यह वचन निकलने की देर थी कि परमात्मा की करनी से वह जुलाहिन सचमुच ही कमली हो गई। उसने ऊल-जलूल बोलना और घर के बर्तन तोड़ने प्रारम्भ कर दिये। सुबह होने पर जुलाहिन का पति अपनी पत्नी को लेकर गुरु दरबार में उपस्थित हुआ और उसने रात वाली सारी बात गुरु अंगद देव जी को बता दी। वह हाथ जोड़ कर गलती के लिए माफी मांगने लगा कि उसकी पत्नी ने अमरदास जी के प्रति दुर्वचन कहे हैं। गुरु अंगद देव जी ने कृपा दृष्टि से उस जुलाहिन की तरफ देखा और कहा कि कोई भी अमरदास जी को निराश्रित या दीन न समझे–

> 'इह तां निथाविओं दी थां है निमाणिआं दा माण है
> निउटिआं दी ओट अते निआसिरिआं दा आसरा है।'

इसी तरह के अनेक वर गुरु अंगद देव जी ने बाबा अमदास को देकर उनको अपनी छाती से लगा लिया और कहा–'अब आप मेरा ही रूप हैं। आप में और मुझमें कोई अन्तर नहीं।' लगता है, एक तरह से उन्होंने अपने स्थान पर अमरदास जी को गुरगद्दी देने का फैसला कर लिया था।

गुरु अंगद देव जी की कृपा दृष्टि पड़ने से जुलाहिन ठीक हो गई और उसने गुरु चरणों में शीश झुका दिया।

प्रकट रूप गुर अमर सम जानो

मार्च का महीना समाप्त होने वाला था। बैसाख द्वार पर दस्तक दे रहा था। गुरु अंगद देव जी ने परमात्मा के चरणों में लौट जाने की (अर्थात परम तत्व में विलीन होने की) तैयारी कर ली। जब इस बात की खबर संगत को मिली तो वह व्याकुल हो उठी।

दूर-दूर से संगतें खडूर साहिब पहुंचने लगीं जिससे की अपने प्रिय गुरु के आखिरी बार दर्शन कर सकें। बाबा अमरदास जी को गुरु घर की सेवा करते हुए बारह साल हो गए थे। गुरु अंगद देव जी यह फैसला पहले ही कर चुके थे कि गुरगद्दी की जिम्मेदारी सम्भालने के योग्य बाबा अमरदास जी ही है। जब इस फैसले का पता उनके बेटों दासू जी तथा दातू जी को लगा तो उन्होंने इस बात
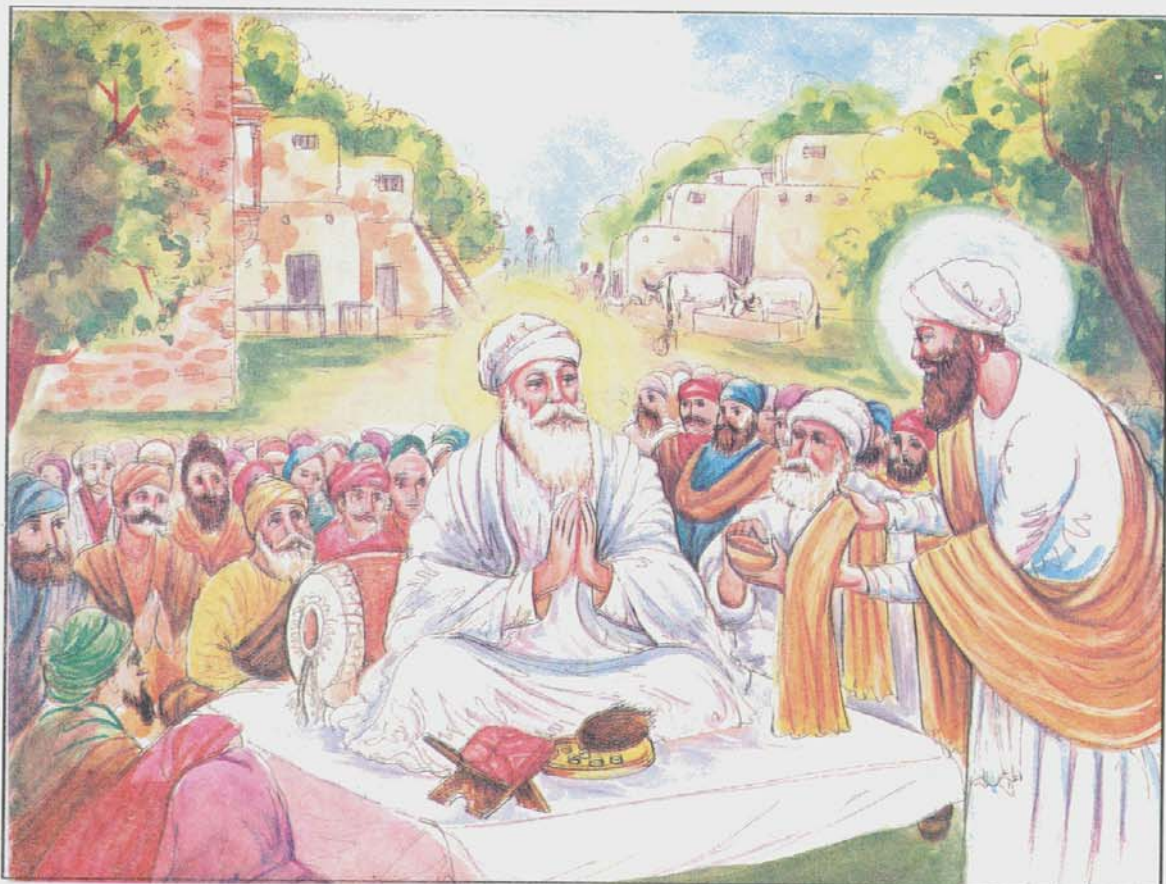
का विरोध किया कि बेटों के होते हुए गुरगद्दी एक सेवक को क्यों दी जाए? गुरु अंगद देव जी शांत थे और अपने निर्णय पर अटल थे। माता खीवी जी ने बेटों को बहुत समझाया कि यह गठरी (अर्थात गुरगद्दी की जिम्मेदारी) बहुत भारी है और यह 'गठरी' केवल अमरदास ही उठा सकते हैं। पर दातू और दासू यह फैसला मानने के लिए तैयार नहीं थे।

अपना अंत समीप आया देख कर गुरु अंगद देव जी ने बाबा बुड्ढा जी आदि प्रमुख सिक्खों को खडूर साहिब आने का संदेश भेजा और अपार संगत के बीच बाबा अमरदास जी को तीसरे गुरु के रूप में स्थापित कर दिया। गुरगद्दी देने की रीति बाबा बुड्ढा जी ने निभाई। गुरु अंगद देव जी ने गुरु अमरदास को यह आदेश दिया कि अब वे गोइंदवाल चले जाएं और वहीं रह कर सिक्खी का प्रचार करें तथा गुरु की ज्योति के प्रकाश को बांटते रहें।

इतिहास में इसका उल्लेख आता है कि गुरु अंगद देव जी संगतों को आखिरी बार दर्शन देकर, सफेद चादर ओढ़ कर लेट गये। यह पता ही नहीं चला कि उनकी ज्योति परमात्मा (अकाल पुरख) में कब विलीन हो गई थी।

जोत माहि रही जोत समाइ जिम जल में ढल जल मिल जाइ।
(महिमा प्रकाश, साखी 16)

यह घटना सम्वत 1609 अर्थात् सन् 1552 की है।

गुरु अंगद देव जी लगभग बारह साल और छह महीने तक गुरगद्दी पर विराजमान रहे। आप जी ने सिक्ख धर्म को प्रफुल्लित करने में बड़ा योगदान दिया।

गुरु अंगद देव जी के पावन स्थान

गुरु अंगद देव जी की प्रमुख यादगारों में उनका जन्म स्थान, गुरुद्वारा दरबार साहिब, गुरुद्वारा अंगीठा साहिब, गुरुद्वारा माई भिराई, ख़ान रज़ादा का गुरुद्वारा, गुरुद्वारा हरि के पत्तण, गुरुद्वारा मल्ल अखाड़ा, गुरुद्वारा तपिआला साहिब तथा देहुरा श्री गुरु अंगद देव जी शामिल हैं।

गुरु अंगद देव जी के अधिकतर स्थान खडूर साहिब में हैं। यह नगर तरन तारन से 20 किलोमीटर पूर्व दिशा की ओर स्थित है। गुरु अंगद देव जी का गुरु पदवी का सारा समय इसी नगर में ही बीता था। इस नगर का प्रसिद्ध स्थान गुरुद्वारा दरबार साहिब (अंगीठा साहिब) है। इस स्थान पर ही गुरु साहिब निवास करते थे तथा यहीं दरबार सजाया जाता था। इस गुरुद्वारा को खड्डी साहिब भी कहा जाता है। दरबार साहिब की अन्दर की परिक्रमा में उस खूंटी का एक यादगारी टुकड़ा भी पड़ा है जिसके साथ पैर अड़ने पर (गुरु) अमर दास जी गिर पड़े थे। यहां ही गुरु अंगद देव जी सन् 1552 में परम तत्व में विलीन हुए थे।

तपियाला स्थान (तप का स्थान)–यह स्थान गांव की आबादी से बाहर उत्तर दिशा की ओर एक फर्लांग की दूरी पर है। यह स्थान गुरु अंगद देव जी के तप के स्थान के रूप में प्रसिद्ध है। गुरुद्वारे के साथ ही एक सरोवर है जिसकी लम्बाई और चौड़ाई 90 गज है। सरोवर के तट पर भाई बाला की समाधि है। ऐसा कहा जाता है कि भाई बाला से गुरु नानक देव जी की जन्म साखी इसी स्थान पर बैठ कर लिखवाई थी। जब गुरु नानक देव जी खडूर आए थे तब वे भी कुछ समय इसी स्थान पर आकर ठहरे थे।

गुरुद्वारा मल्ल अखाड़ा–यह गुरुद्वारा आबादी के उत्तर की ओर स्थित है। यहां गुरु अंगद देव जी बच्चों को मल्ल युद्ध की शिक्षा दिया करते थे तथा यहां ही उन्हें गुरमुखी लिपि के अक्षर सिखाते और पंजाबी पढ़ाया करते थे। शेर शाह सूरी से चौसा तथा बिलग्राम के युद्धों से पलायन करके हुमायुं बादशाह यहां ही गुरु अंगद देव जी से आशीर्वाद लेने आया था।

गुरुद्वारा माई भिराई–(माई विराई)–यह गुरुद्वारा गांव की सघन आबादी के बीच तथा गुरुद्वारा दरबार साहिब से 100 गज पश्चिम की ओर है। माई भिराई गुरु

अंगद देव जी के पिता बाबा फेरू मल जी की मुंह बोली बहिन थी। माई विराई सराय नांगा के तख्त मल की पुत्री थी तथा वह खडूर के समीप के गांव संघर में ब्याही गई थी। गुरु अंगद देव जी के पिता बाबा फेरू मल जी ने काफी समय तख्त मल के पास मुनीमी का काम किया था। इसी कारण माई-भिराई उनको अपना भाई समझती थी। गुरु नानक देव जी के परम तत्त्व में विलीन होने के उपरान्त गुरु अंगद देव जी खडूर आए तो वे लम्बे समय तक अज्ञातवास धारण करके माई विराई के घर ही ठहरे थे। अब इस स्थान पर यह सुन्दर गुरुद्वारा स्थित है।

गुरु अंगद देव जी के कुछ गुरुद्वारे खडूर के बाहर अन्य स्थानों पर भी हैं। इनमें से सबसे बड़ी यादगार सराय नांगा (पुराना नाम मत्ता सराय) में है।

जन्म स्थान गुरु अंगद देव जी : यह स्थान मुक्तसर से 16 किलोमीटर उत्तर पूर्व दिशा में मुक्तसर-कोटकपुरा सड़क पर स्थित है। इसका पहला नाम 'मत्ता की सराय' हुआ करता था। मुगलों के आक्रमणों के समय यह स्थान उजड़ गया था। अब इसका नया नाम सराय नांगा है। यहां ही सन 1504 में गुरु अंगद देव जी का जन्म बाबा फेरू मल जी के गृह में हुआ था। नया गुरुद्वारा गांव की आबादी से पूर्व की ओर एक फर्लांग की दूरी पर है।

खान रज़ादा वाला गुरुद्वारा : खडूर के तपी की ईर्ष्या के कारण तथा लोगों की बार-बार विनती के कारण गुरु अंगद देव जी कुछ समय के लिए खडूर छोड़ कर खान रज़ादा के एक टीला पर चले गए थे। स्थानीय लोगों ने गुरु जी के रहने के लिए छप्पर डाल दिया था। आजकल इस गांव को खान छप्पर के नाम से जाना जाता है। यह गांव गोइंदवाल से 8 किलोमीटर पश्चिम की ओर है। गुरु अंगद देव जी के यहां ठहरने के कारण अब यहां एक सुन्दर गुरुद्वारा स्थित है। गुरु अंगद देव जी की एक और यादगार गांव भैरोवाल में है। खान रज़ादा से वापस खडूर जाते हुए आप यहां ही ठहरे थे।